जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2531

भगवान् शान्तिनाथ

श्री दिगम्बर जैन तीर्थ, भोजपुर (म.प्र.)

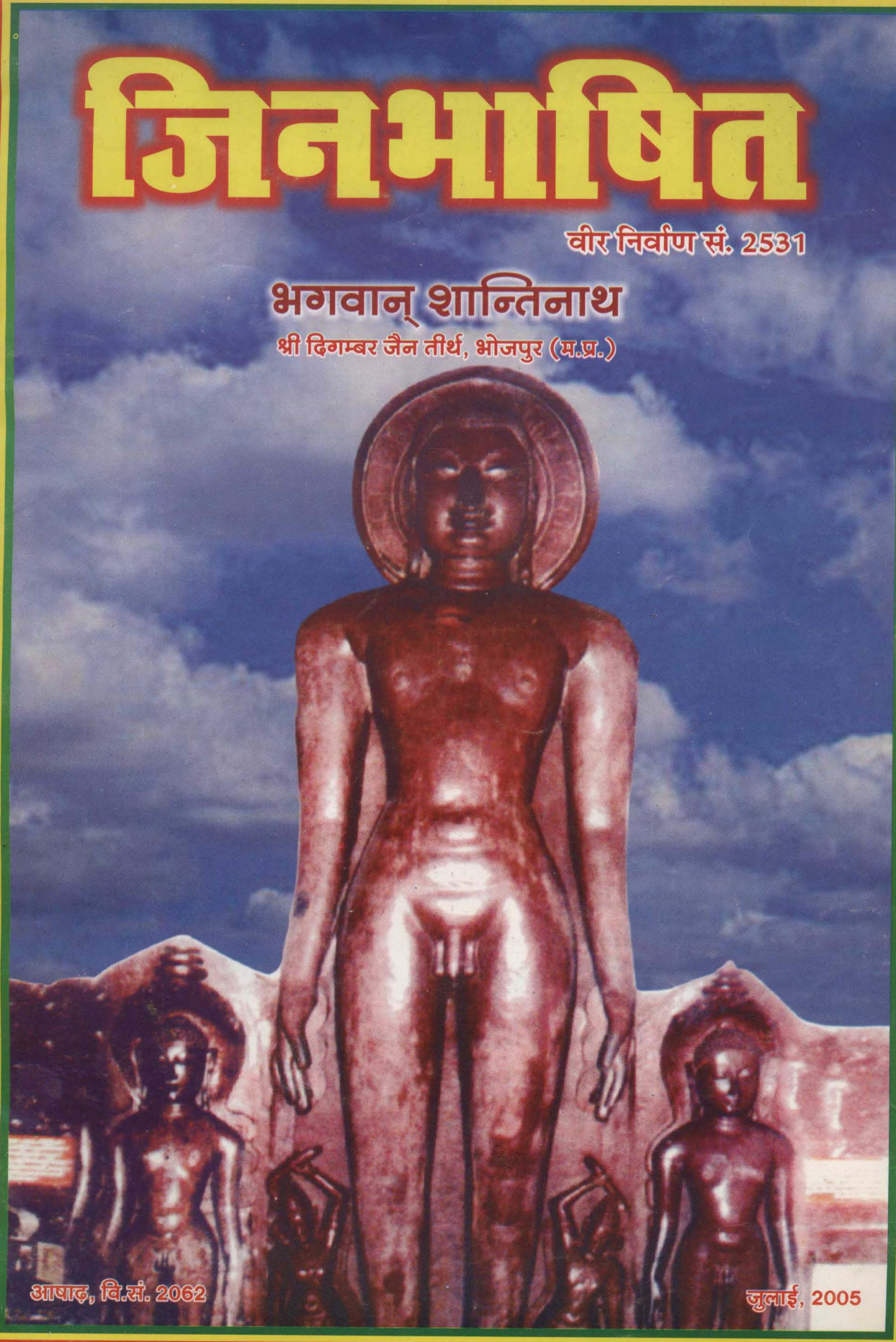

आषाढ़, वि.सं. 2062

जुलाई, 2005

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

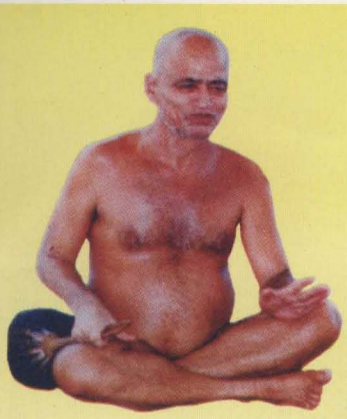

शरीर को गौण करना साधना का प्रथम चरण

• आचार्य श्री विद्यासागर जी

हमेशा-हमेशा संसारी प्राणी शरीर के साथ आत्मतत्त्व को जोड़कर बोलता है। बहुत कम क्षण आते हैं जब अपनी आत्मा से बोल सकता है। आत्मा से बोलना संभव नहीं तो आत्मसाधना प्रारम्भ नहीं। तिर्यंच हमेशा दिगम्बर रहता है, नारकी भी दिगम्बर रहता है और षष्ठकाल में सभी मनुष्य जाति प्रजाति दिगम्बर रहेगी। देव दिगम्बर नहीं रहते।

आपने करेन्ट को कभी देखा है। प्रकाश को तो देखा आखों से, पर करेन्ट अचक्षुदर्शन है। इन्द्रिय और मन की सहायता से अनुभव कर सकते हैं।

शरीर को गौण करके आनंद का अनुभव लेना है। शरीर को उखाड़कर बालों की तरह नहीं फेंका जा सकता। शरीर को गौण करना साधना का प्रथम चरण माना जाता है। एक बार गौण करके ममत्वभाव को छोड़ा जाता है। २८ मूलगुणों में एक मूलगुण है, वह ६ आवश्यक के अन्दर है, जिसे कायोत्सर्ग कहते हैं।

आत्मा का संवेदन करना उतना ही कठिन है जितना करेंट का अनुभव करना। शरीर प्रवृत्ति के साथ शरीर गौण नहीं हो सकता। मुनि महाराज कायोत्सर्ग मुद्रा में सदैव रहते हैं। पाप का त्याग अलग वस्तु है। आपका अनुभव अलग वस्तु। लोभ को छोड़ देते हैं, संतोष को प्राप्त कर लेते हैं। आज तक जिसका स्वाद लिया नहीं तो वह याद नहीं। जीवन में मुनि बनने के अर्थ, बहुत ही सावधानी निकटता की आवश्यकता है। सुबह एवं शाम के समय हमारी छाया (परछाई) लम्बी होती है, जबकि १२ बजे हमारे शरीर की छाया शरीर को नमोऽस्तु करती है। हमारी छाया हमारे भीतर सिमट जाती। मुनि अवस्था ऐसी ही अवस्था है जब हमारी छाया हमारे भीतर सिमट जाती है। राग से छूटना कठिन है। द्वेष से राग विषैला होता है जैसे शूल से फूल। काँटे से सब दूर हो जाते, द्वेष से सब दूर हो जाते, करेंट से सब दूर हो जाते। राग ऐसा करेंट है, जिसे छोड़कर वीतराग बन जाओ।

लगाम लगाने के बाद भी घोड़ा हिनहिनाता रहता है, उसकी हिनहिनाहट हटाना भी आवश्यक है। श्रद्धान के बल पर सारे के सारे कार्य हो सकते हैं। दिन न कटे, कर्म कटे साधना का फल यही है। अहं को कायोत्सर्ग से ही निकाल सकते हैं। कायोत्सर्ग जरूरी है, अनिवार्य है। दीक्षातिथि को याद रखना जरूरी नहीं, दीक्षा हुई, यह याद रखना जरूरी है। तन को भूल जाना, मैं को भूल जाना है 'तजे तन अहमेव'। यह मूलगुण बहुत महत्त्वपूर्ण है। अभव्य को भी ७ तत्त्वों का ज्ञान रहता है। आत्मतत्त्व को जोड़ना बहुत कठिन होता है। आत्मा को प्रधानता देने का लक्ष्य होना चाहिये। प्रत्येक काल में आत्मतत्त्व केन्द्र में रखना होगा, अन्यथा शरीर के साथ साधना का फल नहीं रहता। लेखा-जोखा करें, क्या अच्छे बुरे क्षण व्यतीत किये। जुगाली के रूप में करेंगे तो स्वाद अलग ही रहेगा। अच्छे काम करो, बुरे काम से बचना है, तो अच्छे कार्य को याद करो।

आचार्य श्री विद्यासागर जी के सुभाषित

- स्तुत्य प्रत्यक्ष हो या न हो स्तुति करनेवाला तो गुणों का स्मरण कर पवित्र हो जाता है।
- प्रभु बनकर नहीं, किन्तु लघु बनकर ही प्रभु की भक्ति की जा सकती है।
- जिस प्रकार सीपी के योग से तुच्छ जल कण भी महान् मुक्ताफल बन जाते हैं, ठीक उसी प्रकार भगवान् के प्रति किया गया अल्प स्तवन भी महत् फल प्रदान करता है।
- नाल से जुड़े कमल का जिस प्रकार सूर्य की तेज किरणें भी कुछ बिगाड़ नहीं कर पातीं, उसी प्रकार भगवद्भक्ति से जुड़े रहने पर भक्त का संसार में कुछ भी बिगाड़ नहीं होता।

''सागर बूँद समाय'' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल/588/2003-05

जुलाई 2005 मासिक **जिनभाषित** वर्ष 4, अङ्क 6

सम्पादक
प्रो. रतनचन्द्र जैन

◆

कार्यालय
ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा
भोपाल- 462 039 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-2424666

◆

सहयोगी सम्पादक
पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया,
(मदनगंज किशनगढ़)
पं. रतनलाल बैनाड़ा, आगरा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन, जयपुर
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन, बड़ौत
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन, लखनऊ
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती', बुरहानपुर

◆

शिरोमणि संरक्षक
श्री रतनलाल कंवरलाल पाटनी
(आर.के. मार्बल)
किशनगढ़ (राज.)
श्री गणेश कुमार राणा, जयपुर

◆

प्रकाशक
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-2851428, 2852278

◆

सदस्यता शुल्क

शिरोमणि संरक्षक	5,00,000 रु.
परम संरक्षक	51,000 रु.
संरक्षक	5,000 रु.
आजीवन	500 रु.
वार्षिक	100 रु.
एक प्रति	10 रु.

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

◆ **प्रवचन** : शरीर को गौण करना साधना का प्रथम चरण — आ.पृ.2
: आचार्य श्री विद्यासागर जी

◆ **सम्पादकीय** : वर्तमान में नित्य देवदर्शन, पूजा-प्रक्षाल में उदासीनता एवं उसके निराकरण के उपाय — 2

◆ **लेख**

- मुनि, आर्यिका और श्रावक के आचार मार्ग — 5
: सिद्धान्ताचार्य पं॰ फूलचन्द्र जी शास्त्री
- श्रुतपंचमी पर्व : श्रुत देवी और हमारे कर्त्तव्य — 9
: ब्र॰ संदीप 'सरल'
- यह मंत्र-तंत्र-विज्ञान हमें कहाँ ले जा रहा है? — 11
: प्रा॰ सौ॰ लीलावती जैन
- स्वयं को सँभाले रखना ही बुद्धिमानी है? — 16
: प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन
- भक्तामर-अनुष्ठान : कितना सार्थक ? — 17
: ब्र॰ जयकुमार निशान्त
- सज्जातित्व का वास्तविक विवेचन — 19
: पं॰ सुनील कुमार शास्त्री

◆ **जिज्ञासा-समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा — 23

◆ **कविताएँ**

- हे प्रभु कब मैं सो मुनि बन हूँ : मुनिश्री प्रणम्यसागर जी — आ.पृ. 3
- बोध : धरमचन्द बाझल्य

◆ **समाचार** — 4, 8, 18, 22, 25-32

लेखक के विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
जिनभाषित से सम्बन्धित समस्त विवादों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

वर्तमान में नित्य देवदर्शन, पूजा-प्रक्षाल में उदासीनता एवं उसके निराकरण के उपाय

देवपूजा गुरूपास्तिः, स्वाध्यायः संयमस्तपः।
दानं चेति गृहस्थानां, षट्कर्माणि दिने दिने॥

जिनेन्द्रदेव की पूजा करना, गुरु की उपासना करना, शास्त्र-स्वाध्याय करना/कराना, इन्द्रियों पर नियंत्रण एवं प्राणिरक्षारूप संयम रखना, तप करना एवं दान देना-ये छह आवश्यक कार्य गृहस्थ को प्रतिदिन करना आवश्यक हैं। उक्त छह कार्यों में देवपूजा का प्रथम कर्तव्य के रूप में उल्लेख किया गया है।

जो व्यक्ति देवपूजा करता है, वह देवदर्शन स्वाभाविक रूप से करता ही है। देवपूजा के साथ देवदर्शनका अविनाभाव है। अतः श्लोक में देवदर्शन का पृथक् से उल्लेख न कर देवपूजा में देवदर्शन का अन्तर्भाव किया गया है।

देवदर्शन एवं पूजा-प्रक्षाल इन दो बिन्दुओं पर पृथक्-पृथक् विचार करना आवश्यक है, क्योंकि वर्तमान परिस्थितियों में आज श्रावक देवपूजा करना तो भूल ही रहा है, उसके साथ देवदर्शन से भी दूर हट रहा है। इसके प्रमुख कारण इस प्रकार हैं -

१. धार्मिक शिक्षा एवं संस्कारों का अभाव

इस भौतिक वैज्ञानिक युग में जिस प्रकार लौकिक शिक्षा की व्यवस्था पग-पग पर उत्तम है, उसी प्रकार धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था उसके अनुपात में एक प्रतिशत भी नहीं है। साथ में आज के माता-पिता इतने व्यस्त हो गये हैं कि प्रातः बच्चे को सोता हुआ छोड़ जाते हैं और रात्रि में जब आते हैं तो बच्चे सोते ही मिलते हैं। यदि कदाचित् अवकाश का भी दिन मिल गया, तो टीवी और अखबार उपन्यासों से फुरसत कहाँ है कि बच्चों से बात करें। यदि बात करने की फुरसत भी मिली, तब भी धार्मिक शिक्षा की बात ही नहीं। अतः बच्चों में धार्मिक संस्कार कहाँ से आयेंगे? ऐसी स्थिति में देवपूजा तो बहुत दूर है, देवदर्शन के प्रति भी रुचि नहीं आयेगी।

२. आचरण में धर्म एवं नैतिकता का अभाव

प्रायः यह देखा जाता है कि जिनके माता-पिता प्रतिदिन देवदर्शन/देवपूजा करते भी हैं, तो भी उनके आचरण में सदाचार एवं नैतिकता नहीं आती है। कितने ही माता-पिता देवदर्शन के उपरान्त छोटे-छोटे प्रसंगों को लेकर परिवार एवं समाज में महाभारत करते-कराते देखे जाते हैं। इसी प्रकार व्यापार में नम्बर दो का धन्धा, नौकरी में घूँसखोरी, भोजन में भक्ष्याभक्ष्य का विचार नहीं, दृष्टि में विशुद्धता नहीं। देवदर्शन करनेवाले बुजुर्ग श्रावक/श्राविकाओं के द्वारा दहेज के नाम पर बहुओं के उत्पीड़न की घटनाएँ तो देवपूजा वगैरह को पाखण्ड ही सिद्ध करती हैं। आज का नेतृत्ववर्ग, चाहे श्रेष्ठी हो या पण्डित हो, जब उनकी कथनी और करनी में अन्तर रहेगा, तो आज की तार्किक पीढ़ी पर दुष्प्रभाव पड़ेगा और देवदर्शन के प्रति अरुचि अवश्य होगी।

आज की विद्वान् पीढ़ी जब शास्त्र-गद्दी पर बैठती है, तब देवपूजा का उपदेश देती है, लेख लिखती है, परन्तु दुर्भाग्य है कि वे प्रवचनकार स्वयं प्रतिदिन देवदर्शन/ देवपूजा नहीं करते, तो श्रोता-श्रावक पर भी विपरीत असर पड़ता है। कितने ही ऐसे विद्वान् हैं जो प्रो./शिक्षक आदि विभिन्न पदों पर हैं, वे पर्यूषण-पर्वों पर प्रवचनों में जाते हैं, परन्तु पूजन नहीं करते। यही कारण है कि वर्तमान पीढ़ी पर असर नहीं पड़ता।

इसी प्रकार मंदिरों के मंत्री/अध्यक्ष /ट्रस्टी /नेतृत्ववर्ग, चुनाव में तिकड़म लगाकर मन्दिरों के चुनाव जीत लेते हैं, परन्तु न तो नित्य देवदर्शन करते हैं और न ही पूजन । स्वाध्याय तो बहुत दूर रहता है । इससे यह हानि होती है कि जो प्रतिदिन देवदर्शन पूजाप्रक्षाल करते हैं, वे व्यक्ति व्यवस्था से दूर होते हैं और मंदिरों में अव्यवस्था हो जाती है ।

३. भावात्मक जैनधर्म की व्याख्या

इस समय कुछ विद्वान् एवं प्रबुद्ध प्रशिक्षित श्रावकों द्वारा सामान्य प्रवचनों में प्रायः यह कहा जाता है कि

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"प्रत्येक आत्मा ही परमात्मा है, अत: स्वयं की आत्मा के दर्शन करना चाहिये। जब भाव अच्छे हैं, तो सब कुछ ठीक है।" इस प्रकार के विचार सुनकर आज की नव-पीढ़ी ही नहीं, बल्कि कई प्रौढ़ व्यक्ति भी यह कहते हुए सुने जाते हैं कि जब अपने में ही भगवान है, तो मन्दिर जाने की क्या आवश्यकता है? जब मन्दिर नहीं जायेगा, तो देवपूजा का प्रश्न ही नहीं है। इस प्रकार के व्याख्यानों और प्रवचनों से भी श्रोता देवदर्शन से विमुख हुए हैं।

४. जिनालय की दूरी एवं समयाभाव

आज के युग में श्रावकों की आजीविका के साधनों में व्यापार एवं नौकरी प्रमुख हैं। जिनका ट्रान्सफर ऐसे स्थानों पर हो जाता है, जहाँ जिनालय ही नहीं है और फोटो वगैरह का दर्शन प्राय: मिथ्यात्व कह दिया जाता है। अत: ऐसे परिवारों के बच्चे का देवदर्शन से विमुख होना स्वाभाविक है।

इसी प्रकार जो व्यापारी रात्रि १० बजे घर आकर भोजन करते हैं, वे प्रात: जल्दी उठ नहीं सकते, अत: वे समयाभाव से देवदर्शन से विमुख हो जाते हैं।

५. जल की व्यवस्था

देवपूजा में कुएँ के जल की अव्यवस्था/अभाव और अशुद्धता भी बाधक है। आज के समय में कितने ही मन्दिर ऐसे हैं जिनके कुएँ के जल सूख गये अथवा उपलब्ध हैं तो बहुत दूर हैं या गन्देपानी से भरे हैं।

इस प्रकार वर्तमान में देवदर्शन/देवपूजा-प्रक्षाल में अरुचि के प्रमुख जो कारण गिनाये गये हैं, उनके निराकरण करने के प्रमुख उपाय इस प्रकार हैं -

१. धार्मिक शिक्षा का प्रबन्ध

वर्तमान वैज्ञानिकयुग में लौकिक शिक्षा की व्यवस्था विभिन्न वैज्ञानिक उपकरणों के द्वारा दी जाती है और आज का अभिभावक उच्चकोटि की शिक्षा दिलाना चाहता है और उस पर असीम खर्च भी कर रहा है। उसका परिणाम भी सामने है कि जैनसमाज के बच्चे प्रत्येक क्षेत्र में निपुणता से निकल रहे हैं। अत: जिस प्रकार लौकिक शिक्षा पर हम व्यय करते हैं, उसी प्रकार धार्मिक शिक्षा पर भी लौकिक शिक्षा के अनुपात में ५ प्रतिशत भी खर्च करें, तो बच्चों को धार्मिक शिक्षा की उत्तम-से-उत्तम व्यवस्था हो सकती है। अत: समाज का कर्त्तव्य है कि प्रत्येक मन्दिर में पूजन-फण्ड की तरह शिक्षा-फण्ड बनना चाहिये और उस फण्ड को इतना समृद्ध बनाया जाय, जिससे धार्मिक-शिक्षा हेतु विद्वान् को सरकार के नियमों के अनुरूप आर्थिक सहयोग/वेतन दिया जा सके। जहाँ पर एकाधिक मन्दिर हैं, वहाँ पर दो या तीन मन्दिर मिलकर भी शिक्षा-फण्ड की स्थापना कर सकते हैं । अर्थ के अभाव में विद्वान् भी तैयार नहीं होते और प्रोत्साहित भी नहीं होते। धार्मिक-शिक्षा की व्यवस्था निम्नलिखित प्रकार से की जा सकती है -

क. सायंकालीन पाठशाला

सायंकाल का समय बच्चों की धार्मिक-शिक्षा के लिये विशेष उपयोगी है, क्योंकि उक्त समय में प्रात: एवं दोपहर को स्कूल जानेवाले बालक/बालिकायें भी उपस्थित रहकर लाभ ले सकते हैं। यदि कदाचित् प्रारम्भ में ५० बालक हों और बाद में एक ऐसी भी स्थिति आ सकती है कि १० छात्र ही रुचि लें, तो भी विद्वान् को वेतन देना चाहिये, क्योंकि हम यह क्यों भूल जाते हैं कि गणित आदि पढ़ानेवाले शिक्षक को प्रसन्नतापूर्वक प्रतिमाह रु. ४०० प्रतिदिन ४५ मिनिट पढ़ाने का ही दे देते हैं और धार्मिक-शिक्षक को एक माह में रु. ४००.०० देने में परेशानी महसूस करते हैं। अत: संस्कृति की सुरक्षा के लिये सहर्ष व्यवस्था करनी होगी।

ख. रविवारीय पाठशाला

कुछ मन्दिर/स्कूल ऐसे भी हो सकते हैं कि मात्र रविवार को प्रात: काल ही कक्षा लगाई जाये, जिससे जो बालक/बालिकायें प्रतिदिन नहीं आ सकते, उन्हें सप्ताह में मात्र एक दिन ही शिक्षा दी जाय। अभिरुचि बढ़ने पर दिनों में भी वृद्धि सम्भव है।

ग. शिविर आयोजन

धार्मिक-संस्कारों के लिये शीतकालीन एवं ग्रीष्मकालीन शिविर का आयोजन नितान्त आवश्यक है। इसके लिये मन्दिरों के प्रबन्धकों को पूर्व से ही योजना बनाना चाहिये। सम्प्रति कई संस्थाएँ शिविरों का आयोजन कर रही हैं। मंदिर-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रबन्धकों को उत्साहपूर्वक सहयोग करना चाहिये।

घ. व्याख्यानों/प्रवचनों का आयोजन

वर्तमान में शास्त्र-स्वाध्याय की परम्परा लगभग समाप्त-सी हो चुकी है। जो कुछ शेष है वह वृद्धों तक ही सीमित है। ऐसी स्थिति में आवश्यक है कि मंदिर-प्रबन्धकों को साप्ताहिक/पाक्षिक/मासिक जो भी सुविधा हो, तदनुसार व्याख्यानों/प्रवचनों का आयोजन अवश्य ही करना चाहिए। प्रवचनों से माता-पिता में धर्म की अभिरुचि बनेगी, तो बच्चों को धार्मिक शिक्षा के प्रति प्रेरित कर सकेंगे। माता-पिता धार्मिक अभिरुचि के होंगे, तो आशा की जा सकती है कि बच्चे भी अनुसरण करें।

३. देवदर्शन पर चलचित्रों का निर्माण

इस वैज्ञानिक युग में देवदर्शन के महत्त्व को चलचित्रों के माध्यम से अधिक प्रभावी ढंग से समझाया जा सकता है। जैनपुराणों में एवं कथाओं में देवदर्शन के महत्त्व के कई कथानक आए हुए हैं। उनके आधार पर चलचित्रों का निर्माण करना चाहिये और धार्मिक अवसरों पर प्रसारित करना चाहिये।

४. पंचायत/संस्थाओं द्वारा प्रोत्साहन

धार्मिक शिक्षा के क्षेत्र में जो मन्दिर या शिक्षण-संस्थायें अच्छा कार्य कर रही हैं/करें ऐसी संस्थाओं/मन्दिरों को कम-से-कम ५००१ की धनराशि से सार्वजनिक अवसरों पर पुरस्कृत करना चाहिए।

५. बाल-मण्डलों का गठन

युवा-मण्डलों का गठन सर्वत्र है, परन्तु युवाओं में धर्म के संस्कार नहीं होने से युवामण्डलों के सदस्य या पदाधिकारी अधिकांशतया देवदर्शन ही नहीं करते, तो पूजा कहाँ से करेंगे? अत: १५ वर्ष तक के बच्चों का बालमण्डल रूप में गठन करना चाहिये, जिससे बाल्यावस्था में ही अभिरुचि जागृत हो। इस प्रकार के संगठन कई जगहों पर हैं। बाल्यावस्था के संस्कार ही आगे चलकर युवा-वृद्धावस्था में कार्यकारी होते हैं।

विद्वानों का विशेष दायित्व है कि यदि वे प्रवचन करते हैं, तो देवदर्शन के साथ पूजन भी नियमित करें, अन्यथा कथनी और करनी में अन्तर होने से समाज का विद्वानों के प्रति आस्थाभाव कम होता है। जो प्रतिदिन देवदर्शन/पूजा प्रक्षाल करते हैं, उन सभी का दायित्व है कि प्रत्येक क्षेत्र में उनका आचरण सम्यक् हो व हृदय में दयालुता आदि गुणों का निरन्तर विकास हो।

६. मन्दिरों में जल-व्यवस्था

पूजा-प्रक्षाल हेतु मन्दिरों में कुएँ के पानी की अनिवार्यता समाप्त होना चाहिए और अन्य वैकल्पिक व्यवस्था पर विचार कर व्यवस्था दी जानी चाहिये।

इस प्रकार देवदर्शन/पूजा-प्रक्षाल को दिनचर्या का अनिवार्य अंग मानकर प्रत्येक श्रावक/श्राविका को उन्हें करना चाहिये।

डॉ. शीतलचन्द्र जैन, प्राचार्य

थाणे के हरिओमनगर में वेदीप्रतिष्ठा सम्पन्न

थाणे (पूर्व) में दिगम्बर जैन समाज के उत्साही, कर्मठ, लगन के धनी श्री वीरेन्द्रकुमार जी जैन दोषी के प्रयास से प्रथम बार शिखरबन्द नूतन जिनालय का निर्माण हुआ, जिसका वेदी प्रतिष्ठामहोत्सव १८ मई से २० मई २००५ तक सम्पन्न किया गया। भगवान् शान्तिनाथ जी की प्रतिमा नूतनवेदी पर विराजमान की गयी। सम्पूर्ण विधि प्रतिष्ठाचार्य पं॰ सनतकुमार जी, विनोदकुमार जी रजवाँस (सागर) द्वारा सम्पन्न हुई। श्री मान् मदनलाल जी बैनाड़ा ने तन-मन-धन से सहयोग दिया। श्री अशोक जी पाटनी (आर॰के॰ मार्बल्स) से मन्दिर जी के लिए मार्बल का सहयोग प्राप्त हुआ। श्रीमती रवि एवं श्री वीरेन्द्र जी ने अतिथियों का सम्मान किया।

श्रीमती रवि वीरेन्द्र जैन दोषी, थाणे

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुनि, आर्यिका और श्रावक के आचारमार्ग

सिद्धान्ताचार्य पं. फूलचन्द्र जी शास्त्री

जैन-धर्म निवृत्तिप्रधान धर्म है। इसमें मुक्ति और उसके कारणों की मीमांसा सांगोपांग और सूक्ष्मता के साथ की गयी है। इसका यह अर्थ नहीं कि इसमें प्रवृत्ति के लिए यत्किंचित् भी स्थान नहीं है। वस्तुतः प्रवृत्ति कथंचित् निवृत्ति की पूरक है। अशुभ और शुभ से निवृत्ति होकर जीव की शुद्ध आत्मस्वरूप में प्रवृत्ति हो, यह इसका अन्तिम लक्ष्य है। यहाँ शुभ से हमारा अभिप्राय शुभ राग से है। राग भी बन्ध का कारण है, इसलिए वह भी हेय है।

इसका अपना दर्शन है जो आत्मा की स्वतंत्र सत्ता को स्वीकार करता है। आचार्य कुन्दकुन्द 'समयसार' में पर से भिन्न आत्मा की पृथक् सत्ता का मनोरम चित्र उपस्थित करते हुए कहते हैं, "अहो आत्मन्! ज्ञान-दर्शनस्वरूप तू अपने को स्वतंत्र और एकाकी अनुभव कर। विश्व में तेरे दायें-बायें, आगे-पीछे और ऊपर-नीचे पुद्गल की जो अनन्त राशि दिखलाई देती है, उसमें अणुमात्र भी तेरा नहीं है। वह जड़ है और तू चेतन है। वह विनाशीक है और तू अविनाशीक पद का अधिकारी है। उसके पास सम्बन्ध स्थापित कर तूने खोया ही है, कुछ पाया नहीं। संसार खोने का मार्ग है। प्राप्त करने का मार्ग इससे भिन्न है।"

जैनधर्म एकमात्र उसी मार्ग का निर्देश करता है जो आत्मा के निज स्वरूप की प्राप्ति में सहायक होता है। यद्यपि कहीं-कहीं स्वर्गादिरूप अभ्युदय की प्राप्ति धर्म का फल कहा गया है, किन्तु इसे औपचारिक ही समझना चाहिए। धर्म का साक्षात् फल आत्मविशुद्धि है। इसकी परमोच्च अवस्था का नाम ही मोक्ष है। यह न तो शून्यरूप है और न इसमें आत्मा का अभाव ही होता है। संसार में संकल्प-विकल्प और संयोगजन्य जो अनेक बाधाएँ उपस्थित होती हैं, मुक्तात्मा में उनका सर्वथा अभाव हो जाता है, इसीलिए जैनधर्म में मुक्ति-प्राप्ति का उद्योग सबके लिए हितकारी माना गया है।

१. मुनिधर्म

दूसरे शब्दों में यह बात यों कही जा सकती है कि जैनधर्म प्रत्येक आत्मा की स्वतन्त्र सत्ता को स्वीकार करके व्यक्ति-स्वातन्त्र्य के आधार पर उसके बन्धन से मुक्त होने के मार्ग का निर्देश करता है। तदनुसार इसमें मोक्षमार्ग के दो भेद किये गये हैं, प्रथम मुनि-धर्म और दूसरा गृहस्थ-धर्म। मुनि-धर्म पूर्ण स्वावलम्बन की दीक्षा का दूसरा नाम है।

अट्ठाईस मूलगुण

इसमें किसी भी प्रकार की हिंसा, असत्य, चोरी और अब्रह्म के लिए तो स्थान है ही नहीं। साथ ही साथ, साधु अन्तरंग और बहिरंग पूर्णपरिग्रह का त्यागी होता है। वह अपना समस्त आचार-व्यवहार यत्नाचारपूर्वक करता है। चलते समय जमीन शोधकर चलता है। बोलने का संयम रखता है। यदि बोलना भी है तो हित, मित और प्रिय वचन ही बोलता है। शरीर द्वारा संयम की रक्षा के लिए अयाचित और अनुद्दिष्ट निर्दोष भोजन दिन में एक बार लेता है। पात्र और आसन को स्वीकार नहीं करता। आहार के ग्रहण की पूर्ति अंजलिबद्ध दोनों हाथों से हो जाती है और खड़े-खड़े ही उपकरणों में आसक्ति किये बिना आहार लिया जा सकता है, इसलिए पात्र और आसन का आश्रय नहीं लेता। संयम की रक्षा और ज्ञान की वृद्धि के लिए वह पीछी, कमण्डलु और शास्त्र को स्वीकार करता है। किन्तु उनके उठाने-धरने में किसी को बाधा न पहुँचे, इस अभिप्राय से वह पूरी सावधानी रखता है। मल-मूत्र आदि का क्षेपण भी निर्जन्तु और एकान्त स्थान में करता है। काय और मन की यद्वा-तद्वा प्रवृत्ति से विरत रहता है। केश सम्मूर्च्छन-जीवों की उत्पत्ति के स्थान हैं, इस अभिप्राय से वह स्वयं अपने हाथ से उनके उत्पाटन का व्रत स्वीकार करता है। इसके लिए किसी से कर्तरी और छुरा आदि की याचना नहीं करता। कोई स्वेच्छा से लाकर देने भी लगे, तो भी वह उन्हें स्वीकार नहीं करता। उनके स्वीकार करने में या उनसे काम लेने में वह अपने स्वावलम्बन व्रत की हानि मानता है।

साधु की परिग्रह आदि के समान शरीर में भी आसक्ति नहीं होती, इसलिए वह न तो शरीर का संस्कार करता है और न स्नान ही करता है। आवरण और परिग्रह का त्याग कर देने से वह नग्न रहता है। आहार उतना ही लेता है जो शरीर के सन्धारण के लिए आवश्यक होता है। उसके मुँह में आहारजन्य दुर्गन्ध आदि के उत्पन्न न होने के कारण उसे दन्तधोवन आदि की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। वह अपने पाँचों इन्द्रियों के विषयों से सदा विरक्त रहता है। यह प्रत्येक साधु की जीवन-भर के लिए स्वीकृत चर्या है। इसका वह प्रतिदिन शरीर में आसक्ति किये बिना उत्तम रीति से पालन करता है।

साधु के मूलगुण अट्ठाईस होते हैं : पाँच महाव्रत,

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पाँच समिति, पाँच इन्द्रियों के विषयों का निरोध, सात विशेष गुण और छह आवश्यक। इनमें से बाईस मूलगुणों का विचार पूर्व में कर आये हैं। छह आवश्यक ये हैं : सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वन्दना, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान और व्युत्सर्ग। साधु इनका भी उत्तम रीति से पालन करता है। जीवन-मरण, लाभ-अलाभ, संयोग-वियोग, मित्र-शत्रु और सुख-दु:ख में समता-परिणाम रखना और त्रिकाल देव-वन्दना करना सामायिक है। चौबीस तीर्थंकरों को नाम, निरुक्ति और गुणानुकीर्तन करते हुए मन, वचन और काय की शुद्धिपूर्वक प्रणाम करना चतुर्विंशति-स्तव है। पाँच परमेष्ठी और जिन-प्रतिमा को कृति-कर्म के साथ, मन, वचन और काय की शुद्धिपूर्वक प्रणाम करना वन्दना है। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के आलम्बन से व्रतविशेष में या आहार आदि के ग्रहण के समय जो दोष लगता है, उसकी मन, वचन और काय की सम्हाल के साथ निन्दा और गर्हा करते हुए शुद्धि करना प्रतिक्रमण है। तथा अयोग्य नाम, स्थापना और द्रव्य आदि का मन, वचन और काय से त्याग कर देना प्रत्याख्यान है।

विशेष नियम

ये साधु के मूल गुण हैं। इनका वह नियमित रूप से पालन करता है। इनके सिवा उक्त धर्म के पूरक कुछ उपयोगी नियम और हैं जिनको जीवन में उतारने से साधुधर्म की रक्षा मानी जाती है। वे ये हैं-

१. जो अपने से बड़े पुराने दीक्षित साधु हैं, उनके सामने आने पर अभ्युत्थान और प्रणाम आदि द्वारा उनकी समुचित विनय करता है।

२. आगमार्थ के सुनने और ग्रहण करने में रुचि रखता है।

३. गुरु आदि से शंका का निवारण विनयपूर्वक करता है।

४. श्रुत का अभ्यास बढ़ जाने पर न तो अहंकार करता है और न उसे छिपाता है।

५. ज्ञान और संयम के उपकरणों के प्रति आसक्ति नहीं रखता।

६. जिस पुस्तक का स्वाध्याय करता है, उसे स्वाध्याय समाप्त होने तक के लिए ही स्वीकार करता है, अनावश्यक पुस्तकों के संग्रह में रुचि नहीं रखता। अनुसन्धान के लिए अधिक पुस्तकों का अवलोकन करना वर्जनीय नहीं है, परन्तु उनके संग्रह में रुचि नहीं रखता।

७. अपने गुरु और गुरुकुल के अनुकूल प्रवृत्ति करता है।

८. संयम के योग्य क्षेत्र, निर्जन वन, गिरि गुफा या चैत्यालय आदि में निवास करता है।

९. अन्य साधुओं की आवश्यकतानुसार वैयावृत्य करता है।

१०. गाँव में एक दिन और शहर में पाँच दिन से अधिक निवास नहीं करता है।

११. पहले अपनी गुरु-परम्परा से आये हुए आगम का विधिपूर्वक अध्ययन करके गुरु की आज्ञा से अन्य शास्त्रों का अध्ययन करता है।

१२. अध्ययन करने के बाद यदि अन्य धर्मायतन आदि स्थान में जाने की इच्छा हो, तो गुरु से अनेक बार पृच्छापूर्वक अनुज्ञा लेकर अकेला नहीं जाता है; किन्तु अन्य साधुओं के साथ जाता है। अकेले विहार करने की गुरु ऐसे साधु को ही अनुज्ञा देते हैं जो सूत्रार्थ का ज्ञाता है। उत्तम प्रकार से तपश्चर्या में रत है, जिसने सहनशक्ति बढ़ा ली है, जो शान्त और प्रशस्त परिणामवाला है, उत्तम संहनन का धारी है, सब तपस्वियों में पुराना है, अपने आचार की रक्षा करने में समर्थ है और जो देशकाल का पूर्ण ज्ञाता है। जो इन गुणों का धारी नहीं है, उसके एकल विहारी होने पर गुरु का अपवाद होने का, श्रुत का विच्छेद होने का और तीर्थ के मलिन होने का भय बना रहता है तथा स्वैराचार की प्रवृत्ति बढ़ने लगती है। और भी अनेक दोष हैं, इसलिए हर कोई साधु एकल विहारी नहीं हो सकता। जो इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देते हैं, वे भी उक्त दोषों के भागी होते हैं। प्राय: जो गारब दोष से युक्त होता है, मायावी होता है, आलसी होता है, व्रतादि के पूर्णरूप से पालन करने में असमर्थ होता है और पापबुद्धि होता है, वही गुरु की अवहेलना करके अकेला रहना चाहता है।

१३. आर्यिका या अन्य स्त्री के अकेली होने पर उनसे बातचीत नहीं करता और न वहाँ ठहरता ही है।

१४. यदि बातचीत करने का विशेष प्रयोजन हो तो अनेक स्त्रियों के रहते हुए ही दूर से उनसे बातचीत करता है।

१५. आर्यिकाओं या अन्य व्रती श्राविकाओं के उपाश्रय में नहीं ठहरता।

१६. अपनी प्रभाववृद्धि के लिए मन्त्र, तन्त्र और ज्योतिष विद्या का उपयोग नहीं करता।

१७. तैल-मर्दन आदि द्वारा शरीर का संस्कार नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करता और सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग नहीं करता।

१८. शीत आदि की बाधा से रक्षा के उपायों का आश्रय नहीं लेता।

१९. वसतिका आदि का द्वार स्वयं बन्द नहीं करता तथा वहाँ आनेवाले अन्य व्यक्ति को नहीं रोकता।

२०. दीपक या लालटेन की रोशनी को कम-अधिक नहीं करता। बैटरी भी पास में नहीं रखता।

२१. उष्णता का वारण करने के लिए पंखे आदि का उपयोग नहीं करता।

२२. अपने साथ नौकर आदि नहीं रखता।

२३. किसी के साथ विसंवाद नहीं करता।

२४. तीर्थादि की यात्रा के लिए अर्थ का संग्रह नहीं करता और न इसकी पूर्ति के लिए उपदेश देता है।

२५. तथा यात्रा के समय किसी प्रकार की सवारी का उपयोग नहीं करता। पैदल ही विहार करता है। इन नियमों के सिवा और भी बहुत-से नियम हैं, जिनका वह संयम की रक्षा के लिए भली प्रकार पालन करता है।

२. आर्यिकाओं के विशेष नियम

उक्त धर्म का समग्र रूप से आर्यिकाएँ भी पालन करती हैं। इसके सिवा उनके लिए जो अन्य नियम बतलाये गये हैं, उनका भी वे आचरण करती हैं। वे अन्य नियम ये हैं-

१. वे परस्पर में एक-दूसरे के अनुकूल होकर एक-दूसरे की रक्षा करती हुई रहती हैं।

२. रोष, वैरभाव और मायाभाव से रहित होकर लज्जा और मर्यादा का ध्यान रखती हुई उचित आचार का पालन करती हैं।

३. सूत्र का अध्ययन, सूत्रपाठ, सूत्र का श्रवण, उपदेश देना, बारह अनुप्रेक्षाओं का चिन्तवन, तप, विनय और संयम में सदा सावधान रहती हैं।

४. शरीर का संस्कार नहीं करतीं।

५. सादा बिना रंगा हुआ वस्त्र पहनती हैं।

६. जहाँ गृहस्थ निवास करते हैं, उस मकान आदि में नहीं ठहरतीं।

७. कभी अकेली नहीं रहतीं। कम-से-कम दो-तीन मिलकर रहती हैं।

८. बिना प्रयोजन के किसी के घर नहीं जातीं। यदि प्रयोजनवश जाना ही पड़े, तो गणिनी से अनुज्ञा लेकर ही जाती हैं।

९. रोना, बालक आदि को स्नान कराना, भोजन बनाना, दाई का कार्य और कृषि आदि छह प्रकार का आरम्भ कर्म नहीं करतीं।

१०. साधुओं का पाद-प्रक्षालन व उनका परिमार्जन नहीं करतीं।

११. वृद्धा आर्यिका को मध्य में करके तीन, पाँच या सात आर्यिकाएँ मिलकर एक-दूसरे की रक्षा करती हुई आहार को जाती हैं।

१२. आचार्य से पाँच हाथ, उपाध्याय से छह हाथ और अन्य साधुओं से सात हाथ दूर रहकर गो-आसन में बैठकर उनकी वन्दना करती हैं। जो साधु आर्यिकाएँ इस आचार का पालन करते हैं, वे जगत् में पूजा और कीर्ति को प्राप्त करते हुए अन्त में यथानियम मोक्ष-सुख के भागी होते हैं।

३. गृहस्थ-धर्म

मोक्ष-प्राप्ति का साक्षात् मार्ग मुनिधर्म ही है। किन्तु जो व्यक्ति मुनिधर्म को स्वीकार करने में असमर्थ होते हुए भी उसे जीवनव्रत बनाने में अनुराग रखते हैं, वे गृहस्थधर्म के अधिकारी माने गये हैं। मुनिधर्म उत्सर्गमार्ग है और गृहस्थधर्म अपवादमार्ग है। तात्पर्य यह है कि गृहस्थधर्म से आंशिक आत्मशुद्धि और स्वावलम्बन की शिक्षा मिलती है, इसलिए यह भी मोक्ष का मार्ग माना गया है।

समीचीन श्रद्धा और उसका फल

जो मुनिधर्म या गृहस्थधर्म को स्वीकार करता है, उसकी पाँच परमेष्ठी और जिनदेव द्वारा प्रतिपादित शास्त्र में अवश्य श्रद्धा होती है। वह अन्य किसी को मोक्ष-प्राप्ति में साधक नहीं मानता, इसलिए आत्मशुद्धि की दृष्टि से इनके सिवा अन्य किसी की वन्दना और स्तुति आदि नहीं करता। तथा उन स्थानों को आयतन भी नहीं मानता जहाँ न तो मोक्षमार्ग की शिक्षा मिलती है और न मोक्षमार्ग के उपयुक्त साधन ही उपलब्ध होते हैं। लौकिक प्रयोजन की सिद्धि के लिए दूसरे का आदर-सत्कार करना अन्य बात है। वह जानता है कि शरीर मेरा स्वरूप नहीं है, इसलिए शरीर, उसकी सुन्दरता और बल का अहंकार नहीं करता। धन, ऐश्वर्य, कुल और जाति ये या तो माता-पिता के निमित्त से प्राप्त होते हैं या प्रयत्न से प्राप्त होते हैं। ये आत्मा का स्वरूप नहीं हो सकते, इसलिए इनका भी अहंकार नहीं करता। ज्ञान और तप ये समीचीन भी होते हैं और असमीचीन भी होते

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं। जिसे आत्मदृष्टि प्राप्त है, उनके ये असमीचीन हो ही नहीं सकते, इसलिए इन्हें मोक्षमार्ग प्रयोजक जान इनका भी अहंकार नहीं करता। धर्म आत्मा का निज रूप है, यह वह जानता है, इसलिए अपनी खोयी हुई उस निधि को प्राप्त करने के लिए वह सदा प्रयत्नशील रहता है।

पाँच अणुव्रत

इस प्रकार दृढ़ आस्था के साथ सम्यग्दर्शन को स्वीकार करके वह अपनी शक्ति के अनुसार गृहस्थधर्म के प्रयोजक बारह व्रतों को धारण करता है। बारह व्रत ये हैं- पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत। हिंसा, असत्य, चोरी, अब्रह्म और परिग्रह का वह एक देश त्याग करता है, इसलिए उसके पाँच अणुव्रत होते हैं। तात्पर्य यह है कि वह त्रस हिंसा से तो विरत रहता ही है, बिना प्रयोजन के एकेन्द्रिय जीवों का भी वध नहीं करता। ऐसा वचन नहीं बोलता जिससे दूसरों को हानि हो या बोलने से दूसरों के सामने अप्रमाणित बनना पड़े। अन्य की छोटी-बड़ी किसी वस्तु को उसकी आज्ञा के बिना स्वीकार नहीं करता। अपनी स्त्री के सिवा अन्य सब स्त्रियों को माता, बहन या पुत्री के समान मानता है और आवश्यकता से अधिक धन का संचय नहीं करता।

तीन गुणव्रत

इन पाँच व्रतों की वृद्धि के लिए वह दिग्व्रत, देशव्रत और अनर्थदण्डविरतिव्रत इन तीन गुणव्रतों को भी धारण करता है। दिग्व्रत में जीवन-भर के लिए और देशव्रत में कुछ काल के लिए क्षेत्र की मर्यादा की जाती है। गृहस्थ का पुत्र, स्त्री और धन-सम्पदा से निरन्तर सम्पर्क रहता है। इस कारण उसकी तृष्णा में वृद्धि होना सम्भव है। ये दोनों व्रत उसी तृष्णा को कम करने के लिए या सीमित रखने के लिए स्वीकार किये जाते हैं। प्रथम, व्रत को स्वीकार करते समय वह इस प्रकार की प्रतिज्ञा करता है कि मैं जीवन-भर अपने व्यापार आदि प्रयोजन की सिद्धि इस क्षेत्र के भीतर रहकर ही करूँगा। इसके बाहर होने वाले व्यापार आदि से या उसके निमित्त से होने वाले लाभ से मुझे कोई प्रयोजन नहीं है। समय-समय पर यथा-नियम दूसरे व्रत को स्वीकार करते समय वह अपने इस क्षेत्र को और भी सीमित करता है और इस प्रकार अपनी तृष्णा पर उत्तरोत्तर नियन्त्रण स्थापित करता जाता है। इतना ही नहीं, वह आजीविका में और अपने आचार-व्यवहार में उन्हीं साधनों का उपयोग करता है जिनसे दूसरे प्राणियों को किसी प्रकार की बाधा नहीं होने पाती। जिनसे दूसरों की हानि होने की सम्भावना होती है, उनका वह निर्माण भी नहीं करता और ऐसा करके वह स्वयं को अनर्थदण्ड से बचाता है।

चार शिक्षाव्रत

वह अपने जीवन में कुछ शिक्षाएँ भी स्वीकार करता है। प्रथम तो वह समता तत्त्व का अभ्यास कर अपने सामायिक शिक्षाव्रत को पुष्ट करता है। दूसरे, पर्व दिनों में एकाशन और उपवास आदि व्रतों को स्वीकार कर वह प्रोषधोपवास व्रत की रक्षा करता है। शरीर सुखशील न बने और आत्मशुद्धि की ओर गृहस्थ का चित्त जावे, इस अभिप्राय से वह इस व्रत को स्वीकार करता है। वह अपने आहार आदि में प्रयुक्त होनेवाली सामग्री का भी विचार करता है और मन तथा इन्द्रियों को मत्त करनेाली तथा दूसरे जीवों को बाधा पहुँचाकर निष्पन्न की गयी सामग्री का उपयोग न कर उपभोग-परिभोग परिमाणव्रत को स्वीकार करता है। अतिथि सबका आदरणीय होता है और उससे संयम के अनुरूप शिक्षा मिलती है, इसलिए वह अतिथिसंविभाग व्रत को स्वीकार कर सबकी यथोचित व्यवस्था करता है। ये गृहस्थ के द्वारा करने योग्य बारह व्रत हैं। इनके धारण करने से उसका गार्हस्थिक जीवन सफल माना जाता है।

क्रमशः

'ज्ञानपीठ पूजाञ्जलि' के 'प्रास्ताविक वक्तव्य' से साभार

गिरनार में गुरुदत्तात्रेय-प्रवेश द्वार के निर्माण का तीव्र विरोध

भारत के प्रसिद्ध तीर्थ गिरनार के प्रवेश स्थल पर 'गुरुदत्तात्रेय प्रवेश द्वार' बनाने का निर्णय लिया गया है, जिसका भूमिपूजन दिनांक १६ मई २००५ को जूनागढ़ के कलेक्टर द्वारा किया गया। इस प्रवेश द्वार के निर्माण का सम्पूर्ण भारत का जैन समाज तीव्र विरोध करता है और गुजरात प्रदेश के शासन से अनुरोध करता है कि वह साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित न कर धर्मनिरपेक्ष नीति से कार्य करने का प्रयास करे।

'गिरनार प्रवेश द्वार' के बजाय 'गुरुदत्तात्रेय प्रवेश द्वार' बनाकर जैनों के गिरनार तीर्थक्षेत्र पर कब्जा करने की बड़ी भारी साजिश की जा रही है, जिसका पूरी ताकत से विरोध करना आवश्यक है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रुतपंचमी पर्व : श्रुतदेवी और हमारे कर्त्तव्य

ब्र. संदीप 'सरल'

भगवान ऋषभदेव के तीर्थकाल से भगवान महावीर के तीर्थकाल तक श्रुतज्ञान की अविरल धारा चलती रही। भगवान महावीर के मोक्षगमन पश्चात् ६८३ वर्ष तक श्रुत को लिपिबद्ध करने का कार्य प्रारम्भ नहीं हुआ था। आ. धरसेन जी ने इस दिशा में प्रयत्न करके सुयोग्य मुनिद्वय मुनिश्री १०८ पुष्पदंत जी एवं मुनिश्री १०८ भूतबलि जी महाराज को आ. परम्परा से प्राप्त ज्ञान प्रदान किया। भूतबली जी ने ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी को षट्खण्डागम की रचना पूर्णकर चतुर्विध संघ के समक्ष श्रुतज्ञान की पूजा की थी। तबसे यह तिथि श्रुतपंचमी के रूप में जानी जाती है।

श्रुतदेवी और हमारे कर्त्तव्य : आत्मोत्थान में सहायक देव-शास्त्र और गुरु के मध्य शास्त्रों का महत्त्वपूर्ण स्थान हुआ करता है। श्रुत की भक्ति करने से सम्यग्ज्ञान की प्राप्ति हुआ करती है और सद्ज्ञान/भेदविज्ञान से जीव अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है। हमारे आचार्यों ने ज्ञानाराधना हेतु स्वाध्याय की प्रबल प्रेरणा देते हुए स्वाध्याय को परम तप कहा है। इतना ही नहीं, श्रावक एवं श्रमणों की षट्आवश्यक-भावनाओं में अभीक्ष्णज्ञानोपयोगी भावना निरन्तर स्वाध्याय की प्रेरणा हमें दिया करती है।

स्वाध्याय क्या, कैसे, क्यों : शास्त्रों का पठन-पाठन करना व्यवहार स्वाध्याय कहलाता है, तो स्व=आत्मा के निकट वास करना अथवा आत्मा का अध्ययन करना निश्चय स्वाध्याय कहलाता है।

प्रतिदिन नियमित रूप से विनयपूर्वक क्रमबद्ध तरीके से स्वाध्याय करना चाहिए। स्वाध्याय क्यों करना चाहिए? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए आ. पूज्यपाद स्वामी जी सर्वार्थसिद्धि ग्रन्थ में लिखते हैं कि स्वाध्याय करने से प्रज्ञातिशय, प्रशस्त अध्यवसाय, परमसंवेग, तपवृद्धि एवं अतिचारों में विशुद्धि बढ़ा करती है। शास्त्राभ्यास की अपूर्व महिमा है जैसे -

१. मैं कौन हूँ? जन्म, मरण क्या है? संसार में मेरा क्या संबंध है इत्यादि रहस्यात्मक प्रश्न स्वाध्यायशील व्यक्ति के मन में उठा करते हैं।

२. नई दिशा, नये विचार, नये शोध और वैदुष्य के अवसर निरन्तर स्वाध्याय करने वालों को प्राप्त होते हैं।

३. क्रोधादि कषायों की मंदता स्वाध्याय से प्राप्त होती है।

४. पांचों इन्द्रियों के विषयों में जाते हुए मन को स्वाध्याय से ही रोका जाता है।

५. हिंसादिपापों से निवृत्ति एवं हेयोपादेय का ज्ञान स्वाध्याय से ही हुआ करता है।

६. स्वाध्याय के माध्यम से व्यक्ति परमात्मा और परलोक से अनायास सम्पर्क स्थापित कर लेता है।

७. जैसे एक-एक पैसे के संचय से धन की वृद्धि होती है, उसी प्रकार एक-एक सद्विचार का संग्रह करने से ज्ञानकोष की वृद्धि होने से पाण्डित्य की प्राप्ति होती है।

८. केवल धन/ऐश्वर्य से कोई सुखी नहीं हो सकता, अपितु धर्म व तत्त्वज्ञान से व्यक्ति संतोषप्रद जीवन शैली अपनाकर सुखी बन सकता है।

९. स्वाध्याय करनेवाला व्यक्ति अधिकाधिक ज्ञान प्राप्तकर आनंद को प्राप्त होता है।

१०. आभ्यन्तर चक्षुओं को खोलने के लिए स्वाध्याय एक अंजनशलाका है।

११. स्वाध्यायशील मानव के अन्दर प्रशम, संवेग, अनुकम्पा आदि उदारगुणों की पूंजी निरन्तर बढ़ती रहती है।

१२. स्वाध्याय संसार की नश्वर आकुलता से ऊपर उठने के लिए अनुपम नसैनी के समान है।

१३. स्वाध्यायशील व्यक्ति को लोक में यश-सम्मान भी प्राप्त होता है।

१४. स्वाध्याय एक शुभक्रिया है, इसके माध्यम से अतिशय पुण्य का आस्रव-बंध होता है।

१५. स्वाध्याय करने से जीव परम्परा से आत्मानुभव-दशा को प्राप्त होता है।

स्वाध्याय की महिमा वचनातीत है। हमें प्रमाद का त्यागकर निरन्तर स्वाध्याय में ही अधिकाधिक समय देना चाहिए। श्रुतपंचमी पर हमें स्वाध्याय करने का नियम लेकर स्वाध्याय की परम्परा को जीवंत रखना चाहिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शास्त्रभण्डारों के प्रति हमारे कर्त्तव्य : हमारे जिनालयों की अपूर्व शोभा जिनप्रतिमाओं एवं शास्त्रभण्डारों से हुआ करती है। हमारे पूर्वज पूर्वाचार्यों द्वारा लिखित मां जिनवाणी को ताडपत्र-भोजपत्र एवं कागजों पर लिखकर-लिखवाकर मंदिरों में विराजमान करवाते रहे हैं। वे इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि इन ग्रन्थों में जैन संस्कृति, इतिहास, सिद्धान्त, आचार-विचार की प्रचुर सामग्री समाहित है। श्रुतपंचमी पर्व के अवसर पर श्रुतभण्डारों के संरक्षण-संवर्द्धन का कार्य बृहद स्तर पर किया जाता है।

श्रुतपंचमी पर्व पर इतना तो अवश्य करें

१. श्रुतपंचमी को जिनवाणी की शोभायात्रा, सामूहिक श्रुतपूजन कर श्रुतपंचमी पर्व की महत्ता पर धर्मसभा का आयोजन करना चाहिए।

२. शास्त्रभण्डार के समस्त ग्रन्थ निकालकर हवा में रखना चाहिए, ग्रन्थों की, अल्मारियों की सफाई करना चाहिए। पुराने-जीर्ण शीर्ण वेष्टन (अछार) एवं कव्हर अलग करके नये चढ़ाना चाहिए।

३. कम से कम एक ग्रन्थ बुलवाकर शास्त्रभण्डार में विराजमान करना चाहिए।

४. यदि हो सके तो सामूहिक शास्त्रसभा प्रारम्भ करना चाहिए। यदि यह संभव न हो तो स्वतंत्ररूप से स्वाध्याय अवश्य ही करना चाहिए।

५. हस्तलिखित ग्रन्थों की पूर्ण सुरक्षा के लिये ग्रन्थों को सूती कपड़ों में कसकर बाँधना चाहिए, ताकि शीत-धूप से प्रभावित न हों।

६. शास्त्रभण्डार के स्थानों पर खाद्य सामग्री न रखी जावे, शीत आदि का प्रकोप न हो इस बात का ध्यान रखा जावे।

७. कीड़े-मकोड़े, दीमक आदि से बचाव हेतु अल्मारियों में सूखी नीम की पत्ती अथवा नीम की खली रखें।

८. अजवायन की पोटलियां अथवा लवंग-चूर्ण अल्मारियों में रखें।

९. ग्रंथभण्डार का सूचीकरण कर पूर्ण जानकारी रखें।

१०. अपने-अपने ग्रन्थ भण्डारों के व्यवस्थापन में सहभागी अवश्य बनें।

आशा है हमारे श्रुतप्रेमी उपासक अवश्य ही श्रुतसेवा का संकल्प लेकर श्रुतज्ञान से केवलज्ञान तक की यात्रा पूर्ण करेंगे।

अनेकान्त ज्ञान मंदिर शोध संस्थान, बीना

किंकर्त्तव्य विमूढ़ जैन समाज क्या अब भी जागेगा ?

निर्मलकुमार पाटोदी

गिरनार सिद्धक्षेत्र पर सोमवार १९ मई २००५ तक जितना कुछ घटित हुआ है, उस सबके बावजूद भी समाज के संगठन, तीर्थक्षेत्र कमेटियाँ, सन्त, विद्वान् न सचेत दिख रहे हैं और न गंभीर। योजनाबद्ध और संगठित रूप से अर्थ सामर्थ्य के साथ फरवरी २००६ को आयोजित पूज्य भगवान बाहुबली मस्तकाभिषेक के लिये सब कुछ किया जा रहा है। गिरनार के डूबते अस्तित्व को बचाने के लिये अँगूठा कटाकर शहीद होने की प्रवृत्ति दिखाई दे रही है। किसी के अन्तर्मन में यह विचार नहीं कौंध रहा है कि जब तक गिरनार सिद्धक्षेत्र की रक्षा नहीं हो जाती तब तक न बाहुबली का महामस्तकाभिषेक करेंगे, न पंचकल्याणक करेंगे, अपितु समूचे समाज को जागृत और सक्रिय करके एक सूत्र में बँधकर सारी शक्ति तीर्थराज गिरनार के लिये अर्पण करेंगे। गिरनार दिगम्बर जैन समाज की पहचान है, इसके बिना जैन संस्कृति का एक अंग कम हो जाएगा। भविष्य में हमारे अन्य सिद्धक्षेत्र गँवाने का पथ प्रशस्त होने का भय है। क्यों नहीं वर्षायोग में सन्तगण सिर्फ गिरनार की चर्चा करें? क्यों नहीं राष्ट्रीय स्तर पर तीर्थरक्षा के लिये सिर्फ एक कमेटी काम करे? क्या अपनी-अपनी ढपली-अपना अपना राग अलापना अब भी जरूरी है? क्या इतना अधिक पानी सिर पर से निकल जाने के बाद भी हमारी आँखें नहीं खुलेंगी? हाथों से तीर्थक्षेत्र फिसलता हुआ जानने के बाद भी हम चैन की नींद सोए रहेंगे? कितनों का अंतर्मन विचलित है? तीर्थ कराह रहा है, समाज नहीं । प्रहार तीर्थ पर जो हुआ है।

२२, जाँय बिल्डर्स कॉलोनी, इन्दौर (म.प्र.)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह मंत्र-तंत्र-विज्ञान हमें कहाँ ले जा रहा है ?

प्रा. सौ. लीलावती जैन

आ. गुणधरनंदी जी लिखित मंत्र-तंत्र विज्ञान का (द्वितीय भाग-पृष्ठ ११०) किसी ने पढ़ने के लिए दिया। हमने सोचा जैन मंत्रशास्त्र की विज्ञाननिष्ठ भूमिका से मेल बिठानेवाली भूमिका के तहत यह ग्रंथ लिखा गया होगा। अत: उत्सुकतापूर्वक पढ़ना आरंभ किया और पाया कि यह 'लघुविद्यानुवाद की छोटी बहन' के रूप में है। इसे पढ़कर विचार आया कि इस प्रकार का मंत्रविज्ञान हमें कहाँ ले जा रहा है?

आ. गुणधरनंदजी ने ऐसी और कुछ (२८ तक) अन्य किताबों का संकलन, संपादन, लेखन किया है। उनमें कुछ ये नाम हैं- विद्यानुशासन, जैन वास्तुविज्ञान, मुहूर्त विज्ञान, यात्राशकुन, अंकज्योतिष, यंत्र-मंत्र-आराधन, सरस्वती-कल्प, ज्वालामालिनी-कल्प, स्वर-विज्ञान, ईंट का जवाब पत्थर से आदि हैं। सबके नाम पढ़कर हम जान गए हैं कि आ. महावीरकीर्ति जी से पनपी यह मंत्र-तंत्र-विज्ञान की धारा जाली विद्यानुवाद के इर्द गिर्द ही घूम रही है, जिसमें जारण, मारण, तारण, उच्चाटन, स्तंभन, वशीकरण, आकर्षण, विद्वेषण तथा निमित्त, शकुन आदि विद्याओं का समावेश है। इनमें रोग मंत्र, रक्षा-मंत्र, विद्या-मंत्र, प्रेत-मंत्र, कार्यसिद्धि-मंत्र आदि अनेकों मंत्रों का भी समावेश है।

हमने १९८४-८५ के दरमियान 'लघुविद्यानुवाद के विरोध में' और 'पू.आ. विमलसागरजी को खुला आवाहन' शीर्षक से जो २ परचे देश भर बँटवाये थे, उसमें हमने इस मंत्र-तंत्रवादी धारा की अप्रवृत्तियों को खुला किया था। परंतु सच्चे देव-शास्त्र-गुरु-स्वरूप के सही अध्ययन के अभाव में, स्वाध्याय से वंचित अज्ञ समाज, भौतिक सुखों की अभिलाषा से, राग-द्वेष के मोह जाल में फँसता इन विषयों में अपना समाधान ढूँढ रहा है। प्रस्तावना के दो शब्द में आ. गुणधरनंदी जी के अनुसार, 'मंत्र विज्ञान अनादि निधन है।' हम उनसे पूछना चाहते हैं कि कौन सा मंत्र-विज्ञान अनादि निधन है? उपादेय या हेय? शुभ या अशुभ? आपने जो मंत्र विज्ञान प्रकाशित किया है वह हेय है या उपादेय? क्या वह वीतरागता को बढ़ावा देता है? या संसारसुखों की अभिलाषाएँ पूर्ण करता है?

आप लिखते हैं "मंत्रसाधन द्वारा देवी देवता अपने वश में हो जाते हैं... मंत्र-सिद्धि-प्राप्त साधक को संसार का समस्त वैभव सुलभ हो जाता है।...इस भौतिकताप्रधान युग में मानव सुविधा चाहता है और चमत्कार भी! ...परंतु पाखंडियों ने छल और प्रपंच का जाल फैलाया और इस महान् विद्या के प्रति घृणा और अविश्वास प्राप्त करा दिया।" ...तो क्या मिथ्या मंत्र-तंत्र का विरोध करने वाले आ. कुंदकुंद पाखंडी छलकपट करनेवाले थे ?

आइए! इस पर अधिक विचार न करते हुए हम पाठकों को उन मंत्रों का परिचय कराते हैं जिससे वे स्वयं जान लें कि ये मंत्र हमें कहाँ ले जा रहे हैं? और मंत्रविज्ञान के नाम पर हमारी श्रद्धा में कौन सा विज्ञान झोंका जा रहा है?

इस पुस्तक में प्रस्तुत मंत्रों की भाषा अधिक स्थान पर राजस्थानी-ढुँढारी से मिलती जुलती है। और कई मंत्र संस्कृत में हैं। हमने आ. कुंथुसागर द्वारा प्रकाशित लघुविद्यानुवाद के मूल ताडपत्रीय ग्रंथ का संशोधन किया। परंतु वह ग्रंथ जैन पूर्वाचार्य (के नाम से) लिखित प्रमाणित नहीं होता। न हि लघुविद्यानुवाद में समाविष्ट हिंसक मंत्रतंत्र जैन आचार्यों के लिखे लगते हैं।

२०वीं सदी के प्रथमाचार्य पू. शांतिसागरजी महाराज ने इस प्रकार की मंत्र-तंत्रवादी प्रवृत्तियों को कभी प्रश्रय नहीं दिया। उनकी शिष्यपरंपरा में भी वह दिखायी नहीं देती। परंतु पू.आ. महावीरकीर्तिजी से यह मंत्रतंत्र की धारा पनपी है जो उनकी शिष्यपरंपरा में दिखायी देती है। हम आ.कुंथुसागर तथा उनके सभी शिष्यों से विनयपूर्वक कहना चाहते हैं कि यह विद्यानुशासन या विद्यानुवाद जहाँ कहीं से भी भोजपत्र-ताड़पत्र में लिखित प्राप्त हुआ हो, जैन संशोधक-अभ्यासकों को उपलब्ध करायें, जिससे कि उनकी प्रामाणिकता सिद्ध की जा सके। उपलब्ध मंत्र तो अन्य-अजैन नाथपंथीय, शाक्तपंथी, हठवादी आदि विचारधारा से आये प्रतीत होते हैं। जैनत्व का स्पर्श बताने के लिए मात्र बीच में णमोकार मंत्र का समावेश गलत उद्देश्यपूर्ण तथा अस्थायी लगता है। कुछ नमूने 'जैन मंत्र विज्ञान' से उद्धृत कर रही हूँ-

(१) **रक्षा मंत्र** - ६ (पृष्ठ १४) **आगे नरसिंह, पीछे नरसिंह, ...मरमरठा में फिरूँ, मणिया मांस खाऊँ .....मैं हनुमंत का बालक .....आदि।** इस मंत्र की भाषा राजस्थानी से मिलती है। इसमें नरसिंह, हणमंत, नाहरसिंह, भैरूजी, गोरखनाथ आदि नाम आये हैं। डाकिनी, शाकिनी, डंकनी, शंखनी, सालिनी, बीजासनी, कालका आदि के भी नाम आये हैं।

प्रश्न - क्या इन डाकिनी, शाकिनी आदि से होनेवाले

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घात से रक्षा करने को ये मंत्र दिये गये हैं? क्या यह रक्षा हनुमंत, गोरखनाथ, नरसिंह आदि करेंगे? मांस खाने की बात कहने वाले मंत्र क्या जैन मंत्र हो सकते हैं?

(२) **रक्षामंत्र** ७ (पृ. १४-१५) - **'लुकमान हकीम हिकमत के बादशाह दमेस्यां मुर्तजहाली चढ़े ख्वाजा इतवारी, चढ़ी सर्वा पूरा की असवारी... इन पीरों की ऐसी हांक जे मारे सात समुद्र पार, आय लगाऊँ खुवाजा के पाय, गुरु चोर हराम खोर... न करोगे तो दुहाई ख्वाजा मुईनुद्दीन की हाजरी सो हाजरी।'**

प्रश्न-ये लुकमान हकीम, ख्वाजा मुईनुद्दीन क्या जैन पूर्वाचार्य हैं? क्या यह भाषा अनादि-अनिधन मंत्र की भाषा लगती है?

(३) **क्षेत्रपाल मूल मंत्र** ४ - इस मंत्र के जपने से बंधन छटे, बंदीखाने से छूटे...

प्रश्न-क्या चोरों, खूनी, डाकुओं के लिए काम आसान नहीं हो जाएगा? कोई भी दुष्कृत्य करो, मंत्र जपने से जेल से मुक्ति मिल जायेगी? क्या भगवान अंतरिक्ष पार्श्वनाथ (शिरपुर) जो कई वर्षों से ताले में बंद हैं, मुक्त हो सकते हैं? बेचारे कार्यकर्ताओं के कोर्ट कचहरी के चक्कर से तो जान छूटे? आज तक किसी आचार्य को यह क्यों नही सूझा?

(४) **क्षेत्रपाल मूल मंत्र १३** - यह मंत्र जपने से क्षेत्रपाल प्रत्यक्ष आवे तथा गुड़ पानी में घोले... प्रसन्न भवति।

प्रश्न-क्या क्षेत्रपालजी को बुलाकर काफी काम निकलवाये जा सकते हैं? गिरनार क्षेत्र पर अनधिकृत कब्जा जमाने वालों को ये क्षेत्रपालजी ठीक कर देंगे?

(५) **क्षेत्रपाल मूल मंत्र १५** - जाप २७००० कीजै। **कोडिया लोभाण खेवे। जाप पूरा हुयां पक्षी नैवेद्य संपूर्ण कीजै। पाछे लापसी, घूघरी, बड़ा को भक्ष दीजै। जो कहे सो करे। राजा प्रजा, वश करे, स्त्री-आकर्षण करे, ...परद्वीप बैरीने नाखें। परदेस थी वस्तु आणी छै। परदेस मेवा आणी दे।**

प्रश्न - लोभाण (धूप) खेना, लापसी, घूघरी, बड़ा का नैवेद्य देकर अगर क्षेत्रपाल महाराज प्रसन्न होते हैं, तो क्या रोज यह नैवेद्य देकर हम जो कहेंगे सो वे करेंगे? ये क्षेत्रपाल प्रभो! महँगाई कम कर दो! त्सुनामी लहरों से पीड़ित के मकान बनवा दो? राजा, प्रजा को वश में कर देंगे? स्त्री आकर्षण भी करवा देंगे? तब तो हर कोई ...खैर! क्या आप अलाउद्दीन के चिराग हैं? अगर हैं तो कम से कम हमें परदेस से बादाम काजू तो मँगवा दीजिए, ताकि भूख से मरने वालों को दे सकें।

(६) **ज्ञान व विद्या प्राप्ति मंत्र ५** - **यक्षिणी आकर्षिणी, घंटाकरणी पिशाचिनी विशल्ला मम स्वप्न दर्शय स्वाहा।**

प्रश्न-यह पिशाचिनी का मंत्र जपने से वचन सिद्धि होगी? क्या वह पिशाचिनी हमारे मुख से बोलेगी? और वह नहीं निकली तो? क्या भूत-प्रेत, पिशाच भगाने के मंत्र और पढ़ने होंगे? क्या ये जैन मंत्र हैं? पिशाचिनी की आराधना करना जैन धर्म में मान्य है? अगर यह पिशाचिनी ज्ञान व विद्या दे सकती है तो ज्ञान के क्षयोपशम का, ज्ञानावरणादिकर्म-फल का क्या मतलब रह जाता है? इस मंत्र के आगे कर्मसिद्धांत का विचार करने की क्या आवश्यकता रह जाती है? कोई भी पाप करो और मंत्र से झड़वा दो, मुक्ति हो जाएगी?

(७) **मंत्र ७**-यह मंत्र १ लाख बार जपे तो सर्व विद्या आवे। सब झगड़ों से विजय होवे।

प्रश्न - शिखरजी, गिरनारजी आदि विवादों में उलझे तीर्थक्षेत्रों को यह मंत्र बड़ा ही लाभकारी है, अगर यह मंत्र प्रतिपक्ष के हाथ में चला गया तो क्या हम हार जायेंगे?

(८) **धन व क्रय-विक्रय लाभ-१**-इस मंत्र में चावलों पर ५०० जाप करें और गल्ले में डाले तो क्रय विक्रय में लाभ हो।

प्रश्न - समाज में ८०% बेरोजगार जैन गरीब युवकों को छोटे-छोटे कारोबार दिला दिये जायें और इस मंत्र का पाठ पढ़ाया जाय तो क्या उनकी दरिद्रता दूर हो सकती है? सब समाज के संपन्न होने में इसमंत्र से बहुत लाभ होगा?

(९) वचन चातुर्य मंत्र ३-**ॐ अजीजी भवानी स्वाहा...**

प्रश्न-**यह अजीजी भवानी कौन है?** क्या वचन चातुर्य देनेवाली सरस्वती है? या शिवाजी महाराज की कुलदेवता भवानी देवी है? क्या वचन चातुर्य किसी के देने से मिलता भी है? क्या पशु की भाषा समझने से उनके दुख दर्द, आक्रोश को भी मंत्र जपने वाले समझ सकेंगे? क्या यह मंत्र पढ़कर पशु भाषा समझकर कसाइयों, बूचड़खाने वालों का हृदय परिवर्तन होगा?

(१०) **कर्ण पिशाचनी मंत्र**-(कर्ण पिशाचनी देवी की आराधना, कर्ण पूजा कही है, जंगली बेर के कांटे और जंगली बराह का दांत पास में रखने को कहा है।) **विशेष यह है कि यह मंत्र आ. गुणधरनंदी जी का स्वयं आजमाया हुआ, सिद्ध है। चैलेंज के साथ लिखा है कि कोई भी साधक आकर इसे परख सकता है। हमारा आ. गुणधरनंदीजी को विनयपूर्वक निवेदन है कि अगर यह कर्णपिशाचिनी मंत्र उनको सिद्ध है,**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तो वे उसके सामर्थ्य से सम्मेद शिखरजी, गिरनारजी, अंतरिक्ष पार्श्वनाथजी (शिरपुर) के विवाद को सुलझायें। जैन समाज उनके पाँव धोकर पियेगी।

आ. पद्मप्रभमलधारी देव ने नियमसार के अजीव अधिकार के श्लोक ५० की टीका में लिखा है -

इति विरचित मुच्चैर्द्रव्यषट्कस्य भास्वद्,
विवरणमतिरम्यं भव्यकर्णामृतं यत् ।
तदिह जिनमुनीनां दत्तचित्तप्रमोदं,
भवतु भवविमुक्त्यै सर्वदा भव्यजन्तोः ॥५०॥

अर्थ - भव्यों के कर्णों में अमृत सदृश छह द्रव्यों का अति-रम्य जिनमुनियों के चित्त को प्रमोद देने वाला, विस्तारपूर्वक किया गया षट्द्रव्य विवरण भव्य जीवों को सदा मुक्ति का कारण हो।

और आप तो कानों में अमृत घोलनेवाली जिनवाणी को छोड़ कर्णपिशाचिनी को सिद्ध कर बैठे हैं। अब हम क्या कहें?

(११) **भूत-प्रेत भगाने वाले मंत्र** (पृ.३३) - इस मंत्र से क्या काली माँ प्रत्यक्ष दर्शन देती है? क्या हमारी उज्ज्वल जिनवाणी माता को छोड़ इस काली माँ के दर्शन करने को हमारे आचार्यों ने कहा है?

(१२) (पृ.३४) **इस मंत्र का सवा लाख जप करने से माँ तारादेवी नित्य सिरहाने दो तोला सोना रख देती है ...तब तो हर किसी को इस मंत्र से रोज दो तोला सोना (यानी करीबन १२ हजार रु.) प्राप्त हो तो कोई व्यापार, मेहनत, नौकरी क्यों करें?**

(१३) **चक्षुरोग निवारण मंत्र** (पृ.३४) - हणमंत को भजने से वे हमारे आँखों आदि के रोग ठीक करते हैं।

तब तो सारे आँखों के डॉक्टरों को अस्पताल बंद कर इन हणमंतजी को ही भजना चाहिए? ...विशेष यह है कि जब इन्हीं आचार्य या मुनिश्री की आँखें खराब होती हैं, तब इन्हें चश्मे का नंबर निकालने के लिए डॉक्टर को पास क्यों बुलाना पड़ता है? क्या ये मंत्र इन पर काम नहीं करते?

(१४) **कार्यसिद्ध मंत्र** - (पृ.४३) **दत्तात्रिय नमः** ...

इस पुस्तक में दिया यह (कल्पवृक्ष के बराबर, चमत्कारपूर्ण?) मंत्र पढ़कर गिरनार वाले पंडे कहेंगे कि हमारे तुम्हारे दत्तात्रेय एक ही तो हैं। ...जैनधर्म हिंदूधर्म की ही तो शाखा है। ...तब हमारे तीर्थ का क्या होगा? इस मंत्र विज्ञान को क्या कहें?

(१५) **वस्तु बढ़ोत्तरी का मंत्र** (पृ.५१) - इस मंत्र के पढ़ने से अटूट भंडार होता है। ...इस मंत्र के पढ़ने से सौ आदमी की रसोई में दो सौ लोग खाना खायें तो भी अन्न खत्म नहीं होता।

प्रश्न-क्या हर शादी-विवाह में थोड़ा सा खाना बनाकर यह मंत्र फूँकें तो सारे गाँव को प्रीतिभोज में बुलाया जा सकता है?

(१६) **षट्गायत्री मंत्र** (पृ. ५४)-जैनगायत्री, ब्रह्म गायत्री, वैश्यगायत्री, सूर्यगायत्री, रुद्रगायत्री, शूद्रगायत्री आदि मंत्रों में वैश्य, सूर्य, वासुदेव, रूद्र, विष्णु आदि के मंत्र हैं। सभी गायत्री मंत्रों ने अनादि अनिधन णमोकारमंत्र को भी फीका कर दिया।

(१७) **दाढ़ का मंत्र**-इस मंत्र में कामाख्या देवी, इस्माईल जोगी, गोरखनाथ आदि का उल्लेख है।

पैसे उड़ाने का मंत्र-(पृ.५८)यह मंत्र पैसे उड़ा लाता है। तो क्या हमारे आचार्य यह कर्म भी सिखायें ?

इसप्रकार अनेकों मंत्र इस पुस्तक में दिये हैं । जैसे-बेड़ी तोड़नेवाले मंत्र, प्रबल बुद्धि करानेवाले मंत्र, अनाज को कीड़ों से बचानेवाले मंत्र, भय दूर करानेवाले मंत्र, अरिष्ट निवारण, स्वप्न फल, मेघ आगमन, पीलिया मंत्र, सर्प-बिच्छू का विष उतारने के मंत्र, शरीर के एक-एक अंग के दर्द के मंत्र, गर्भधारण, गर्भरक्षा, पुत्रप्राप्ति, लड़का होगा या लड़की, सुखप्रसव आदि सभी समस्याओं के हल इन मंत्रों से निकलते हैं। कुछ मंत्रों से चींटियाँ आदि भगायी जाती हैं, मिरगी जाती है। कुछ से घड़ा चलता है। मंत्रित चावल चोर को खिलाने से चोर के मुख से खून गिरता है। और भी विघ्ननिवारण, बुखार आदि रोग निवारण, अग्निनिवारण, (इसमें अग्नि का स्तंभन बताया है), लक्ष्मीप्राप्ति, पुत्रसंपदाप्राप्ति, महामृत्युंजय मंत्र, (इससे आयु बढ़ती है?) जहाँ मूठ मारने के मंत्र हैं वहाँ मूठ उतारने के भी मंत्र हैं। ये काम वीर वेताल आदि करते हैं।.....हर मंत्र संसार का, इंद्रिय भोगों का विषय है। जिससे वीतरागता कोसों दूर है। कहाँ तक चर्चा करें? पढ़कर हम सोच सकते हैं कि इस वीतरागधर्म का क्या होगा?

क्या दि. जैन साधु यह सब करें?

जिन मुनियों पर धर्मरक्षा, शिक्षा, पोषण एवं वृद्धि की पूर्ण जिम्मेदारी है, क्या वे ही धर्म के शाश्वत सिद्धातों के मुँह पर कालिख नहीं पोत रहे हैं? सिद्धातों के विपरीत विचारधाराओं का समर्थन नहीं कर रहे हैं? क्या शाश्वत सिद्धातों को गड्ढे में नहीं डाल रहे हैं? क्या इस ग्रंथ में समाविष्ट कुछ मंत्र-तंत्रों का प्रयोग वे तथा उनसे दीक्षित कई मुनिगण खुलकर नहीं कर रहे हैं? इनमें कई अभक्ष्य पदार्थों को औषधि के रूप में

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सेवन की सलाह क्यों दी गयी है? इन मंत्रों को पढ़ने पर प्रश्न उठता है कि पीर-फकीरों को भजनेवाले जैनसमाज को जैनधर्म की ओर मोड़ने के लिए मंत्र-तंत्रों का प्रयोग कहाँ तक उचित है? क्या मुनियों को इतने घिनौने, हिंसात्मक मंत्र-तंत्र मंजूर हैं?

इसका परिणाम क्या होगा?

इस एक ग्रंथ के पन्ने-पन्ने पर आक्षेपार्ह वचन, मंत्र-तंत्र भरे हैं, तो सब पुस्तकों में अगणित आक्षेपार्ह मंत्र मिल सकते हैं। **सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के अध्ययन-स्वाध्याय से वंचित ९०% जैन इस प्रकार के ग्रंथों को प्रामाणिक आगमवचन समझकर श्रद्धा से स्वीकार करते देखे गये हैं, क्योंकि आचार्यपदस्थ मुनियों द्वारा संकलित,लिखित हैं।** यह स्थिति बड़ी गंभीर है। कई अनभ्यासी इसका गलत उपयोग कर मूढ़ लोगों को फँसा रहे हैं। मिथ्यात्व की तेजी से बढ़ती इस आँधी को इसप्रकार के मंत्र-तंत्र-विज्ञान ने और भड़काया है। **अगर इसे सोच-समझकर नहीं रोका गया तो ९०% स्वाध्याय से वंचित जैनसमाज द्वारा स्वीकृत मंत्र-तंत्रवाद जैनधर्म को, सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के आत्मवाद की पावनता को ले डूबेगा।**

यह विचारधारा आयी कहाँ से ?

भ. महावीर के बाद ६८३ वर्षों तक जिनवाणी की पवित्र गंगा केवल मौखिक रूप से बहती रही। धीरे-धीरे आचार्यपरंपरा से बहते-बहते उसकी धारा क्षीण हो गयी। अन्य जैनपंथियों ने जैसा भी मिला उसका संकलन कर लिया। १२ अंगों में दृष्टिवाद अंग में **१४ पूर्वों में विद्यानुवादपूर्व का नाम आता है। परंतु कोई पाठी न बचने के कारण अनुपलब्ध है। केवल उसमें समाविष्ट विषय और श्लोकों की संख्या आदि की जानकारी मात्र उपलब्ध है। इसलिए अन्य पंथियों द्वारा संकलित ऐसे किसी ग्रंथ को जिनागम के ठोस आधार के अभाव में दिगम्बर जैन पूर्वाचार्यों ने कभी मान्यता नहीं दी।** अब कोई तत्त्वमर्म-अनभिज्ञ, स्वार्थ के लिए या अज्ञानतावश इसे संकलित प्रकाशित करे और बिना संशोधन किये , बिना सिद्धांतशास्त्रों से उसका मूल्यांकन/तुलना किये प्रकाशन करे, तो जिनवाणी की शुद्ध, सात्विक, पवित्र धारा को कलंकित होना पड़ेगा। क्योंकि इतने घिनौने वचन जैन सिद्धांतों के कभी नहीं हो सकते। अगर आ॰ कुंदकुंद पंचपरमागम नहीं लिखते तो मिथ्यात्व का निरंकुश शासन और भी चलता रहता। पर आप तो कुंदकुंद के ग्रंथ निकालकर फेंकने को कहते हैं।

इस दिशा में समाज के सामने प्रस्तुत कुछ प्रश्न

१. क्या साधु के २८ मूलगुणों में यह कार्य बैठता है? मुनियों को ऐसे शास्त्रनिषिद्ध ग्रंथों का संकलन,रचना,प्रकाशन आदि कार्य तथा मंत्र-तंत्र के प्रयोग करने चाहिए?

२. **क्या सुबुद्ध श्रावकों को मंत्र-तंत्र, प्रश्न, भविष्य आदि पूछने के लिए मुनियों के पास जाना चाहिए?**

३. क्या ऐसे मंत्र-तंत्र वाद को फैलाने वाले मुनियों से चर्चा कर उन्हें सही मार्ग में मोड़ने का काम शास्त्री पंडित, विद्वानों को नहीं करना चाहिए? जिससे मुनिधर्म की रक्षा हो? अगर मुनि न मानें तो उनका खुलकर विरोध नहीं करना चाहिए? धर्म बड़ा है या व्यक्ति?

४. क्या जैन समाज में पनपती यह अंधश्रद्धा हमें ठीक दिशा में ले जा रही है? इस दिशा में हमें किस तरह काम लेना चाहिए?

५. क्या मंत्र-तंत्र से सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का तथा जैन सिद्धान्तों का श्रद्धान, अध्ययन का भाव होता है? क्या यह नाथपंथी,हठवादी साधुओं की असत् प्रवृतियों का समर्थन नहीं है?

६. क्या इन मंत्रों द्वारा आत्मकल्याण होता है? **मंत्र-तंत्रों का आश्रय लेना क्या कर्मवाद के शाश्वत मूल्यों को झुठलाना मात्र नहीं है?**

७. क्या ये मंत्र-तंत्र अहिंसा,क्षमा,समता,दया तथा आत्मलीनता इत्यादि सत्-शुभ भावों के अनुकूल एवं वीतरागता के पोषक हैं?

८. क्या सुबुद्ध श्रावकों को, मुनियों को ऐसे ग्रंथ घर से, मंदिर से निकालकर पानी में डुबोकर नष्ट नहीं कर देने चाहिए? जिससे आगे आनेवाली पीढ़ी को असत् प्रवृत्तियों से रोका जा सके, भविष्य में ऐसी कृति जन्म न ले, न ये प्रमाण शेष रहें तथा पवित्र जिनवाणी के पवित्र प्रवाह में घुस आये गंदे नालों का नामोनिशान मिट सके।

९. क्या तथाकथित मुनिनिंदा, शास्त्रनिंदा के मिथ्या भय से हम विकृति या मिथ्यात्व फैलाने /पनपाने का दोष उठायें?

१०. **क्या इतने घिनौने वचन सिद्धान्तशास्त्रों के हो सकते हैं ?**

११. गणधराचार्य कुंथुसागर जी महाराज, आचार्य श्री गुणधरनंदी जी महाराज तथा उनके संघ के सभी आचार्य, मुनिगणों के चरणों में शत शत वंदन कर मेरा एक विनम्र प्रार्थनाप्रश्न सादर निवेदित है कि वे इस तरह कब तक आ.कुंदकुंद की वाणी को मंदिर से निकालते रहेंगे और वीतरागता को गड्ढे में डालनेवाले इन ग्रंथों का लेखन, संकलन, प्रकाशन आदि कार्य कर ऐसे मंत्र-तंत्रों को घर-घर में और

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंदिर में स्थापित करते रहेंगे?

हमारे आगम शास्त्र क्या कहते हैं?

हमारे परमागम में जहाँ तहाँ इसप्रकार के मिथ्या मंत्र एवं उनके प्रयोग आदि कुप्रवृत्तियों की घोर निंदा की गयी है। श्रीपद्मप्रभमलधारी देव नियमसार की टीका में कहते हैं-

इति विविधविकल्पे पुद्गले दृश्यमाने,
न च कुरु रतिभावं भव्यशार्दूल तस्मिन्।
कुरु रतिमतुलां त्वं चिच्चमत्कारमात्रे,
भवति हि परमश्री कामिनीकामरूपः॥ ३८॥

अर्थ - विविध भेदोंवाला यह पुद्गल दिखायी देने से हे भव्य शार्दूल!(भव्योत्तम!) तू उसमें रतिभाव न कर। चैतन्यचमत्कारमात्र आत्मा में अतुल रति कर। जिससे तू परमश्री रूपी कामिनी (मोक्ष लक्ष्मी)का वल्लभ होगा।

स्पष्ट है कि स्त्रीवशीकरण के मंत्र से (अगर प्राप्त भी हो तो भी) परस्त्रीसेवन हमारे लिए बंध का कारण है। कोई दि. जैन साधु ऐसे मंत्र-सेवन का उपदेश दे, तो क्या वह जैन साधु कहलाने के योग्य रहेगा?

आगे नियमसार में उसी अध्याय में ४१ वें श्लोक में कहा है-

अथ सति परमाणोरेकवर्णादिभास्वन्,
निजगुणनिचयेऽस्मिन् नास्ति मे कार्यसिद्धिः।
इति निजहृदि मत्त्वा शुद्धमात्मानमेकम्,
परमसुखपदार्थी भावयेद्भव्यलोकः॥

अर्थ - यदि एक परमाणु एकवर्णादिरूप प्रकाशमान ज्ञात-होते निज गुण समूह में है, तो उसमें मेरी कोई कार्यसिद्धि नहीं है। अर्थात् परमाणु तो एक वर्ण,रस,गंध आदि अपने गुणों में ही है। तो फिर उसमें मेरा कोई कार्य सिद्ध कैसे हो सकता है? इसप्रकार निज हृदय में मानकर परमसुखपद के इच्छुक भव्य जीव आत्मा की एकता को भायें।

यह उपदेश सभी भव्य जीवों के लिए है। अर्थात् केवल मुनियों के लिए ही नहीं गृहस्थों के लिए भी हैं ।

ऐसे अनेकों संदर्भ दिये जा सकते हैं। हमारा नम्र निवेदन है कि सुबुद्ध मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविकाओं को चाहिए कि ऐसे जो ग्रंथ खरीदे गये हैं, उन्हें नष्ट करें और सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के परम पावन वीतराग धर्म की रक्षा करें। शुभोपयोग में शुभभावों के हेतुस्वरूप भाव किसी मुनिपद के अविनय का नहीं है।

संपादिका 'धर्ममंगल'
१,सलील अपार्ट. ५७ सानेवाडी, औंध-पुणे ४११००७
फोन : ०२०-२५८८७७९३

सम्पादकीय टिप्पणी

'धर्ममंगल' की सम्पादिका, विदुषी लेखिका ने जिनशासन के प्रति भक्ति से प्रेरित होकर निर्भीकतापूर्वक एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाया है। आज कतिपय दिगम्बर जैन मुनि स्वयं में सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की अलौकिक आभा न जगा पाने के कारण श्रावकों को प्रभावित और आकृष्ट करने के लिए उन्हें मन्त्र-तन्त्र के द्वारा लौकिक कार्यों की सिद्धि का प्रलोभन देते हैं। यह मुनिधर्म के सर्वथा विरुद्ध है। आचार्य कुन्दकुन्द ने ऐसे मुनियों को 'लौकिक' कहा है-

णिग्गंथो पव्वइदो वट्टदि जदि एहिगेहि कम्मेहिं।
सो लोगिगो त्ति भणिदो संजमतवसंजुदो चावि॥

१/६९ प्रवचनसार

इसे स्पष्ट करते हुए आचार्य जयसेन तात्पर्यवृत्ति में कहते हैं- "**वस्त्रादिपरिग्रहरहितत्वेन निर्ग्रन्थोऽपि दीक्षाग्रहणेन प्रव्रजितोऽपि वर्तते यदि ऐहिकैः कर्मभिः भेदाभेदरत्नत्रभावनाशकैः ख्यातिपूजालाभनिमित्तैर्ज्योतिष-मन्त्रवादि-वैदिकादि-भिरैहिकजीवनोपायकर्मभिः स लौकिको व्यावहारिक इति भणितः।**"

अर्थात् वस्त्रादि-परिग्रह का त्याग कर निर्ग्रन्थदीक्षा ग्रहण कर लेने पर भी जो मुनि ख्याति और पूजा के लिए भेदाभेदरत्नत्रय के विनाशक ज्योतिष, मन्त्रतन्त्र, वैद्यक आदि लौकिक कर्म करता है, उसे आगम में 'लौकिक' (मुनियों की रत्नत्रयात्मक अलौकिक वृत्ति से च्युत सामान्य संसारी मनुष्य) नाम दिया गया है।

विदुषी लेखिका ने मन्त्रतन्त्र प्रयोग पर प्रकाशित हुए जिस नवीन ग्रन्थ की चर्चा की है और उसमें वर्णित मन्त्रों के जो उदाहरण प्रस्तुत किये हैं, वे किसी भी विवेकशील जैन के हृदय को जुगुप्सा से भर देनेवाले हैं। वे जैनधर्म और संस्कृति के खिलाफ हैं। उक्त ग्रन्थ और उन जैसे अन्य ग्रन्थ जिन मन्दिर और जैन गृहस्थ के घर में स्थान पाने योग्य नहीं हैं।

रतनचन्द्र जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तर्मन का चिन्तन

स्वयं को सँभाले रखना ही बुद्धिमानी है

(प्राचार्य) नरेन्द्र प्रकाश जैन

'जिनभाषित' में हमारी विज्ञप्ति 'अन्तर्मन की पुकार' छपने के बाद सुधी पाठकों, विद्वज्जनों एवं समाजप्रमुखों के अनेक फोन आए। अधिकांश ने २१ मार्च की घटना पर अपनी पीड़ा व्यक्त की, तो कुछ ने सम्पादन-दायित्व न छोड़ने का आग्रह किया। एक विद्वद्वर ने कहा कि यह समय तो सुप्तावस्था में पड़ी ऊर्जा को प्रज्ज्वलित करने का है। इतनी सारी प्रतिक्रियायें मिलने से **यह लगा कि लोग 'जिनभाषित' को कितने चाव से पढ़ते हैं। इस लोकप्रिय पत्रिका के माध्यम से अपने सभी हितैषियों के प्रति हम अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।**

'अज्ञानेन हि जन्तूनां भवत्येव दुरीहितम्' अर्थात् अज्ञान दशा में ही कोई खोटे कर्म करने को प्रवृत्त होता है। फिरोजाबाद की घटना भी ऐसे ही अज्ञान की निष्पत्ति थी। उसे हम एक उपसर्ग मानते हैं, क्योंकि उसके पीछे कोई उचित कारण ही नहीं था। जिन बच्चों ने इसका ताना-बाना बुना, क्या वे यह चाहेंगे कि इस घटना के प्रसंग में उनका नाम कभी सामने आए? उपसर्ग करने वाले प्राय: अज्ञानी, कायर और डरपोंक होते हैं। वे अज्ञात घुसपैठियों की तरह अपनी पहचान छिपाकर गुरिल्ला शैली में प्रहार कर लुप्त हो जाते हैं। ऐसे तत्त्वों को प्रेरित या प्रोत्साहित करनेवालों की अपनी स्वयं की कमजोरियाँ भी ऐसे अवसरों पर सामने आ जाती हैं। **हर उपसर्ग किसी पूर्वकृत अशुभोदय या पाप-ऋण का ही परिणाम होता है और उसे टालने या चुकाने के लिए समता-भाव बनाए रखना और अपने मन को मलिन न होने देना ही एकमात्र उपाय है।**

जब हम विचार करते हैं तो इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इस घटना की दो प्रतिक्रियाएँ हो सकती थीं- एक तो यह कि जिन बच्चों ने यह शरारत की और जिन बड़ों ने उन्हें इसके लिए प्रेरित किया, उनके प्रति कोई भी पीड़ित व्यक्ति वितृष्णा से भर उठता और दूसरी यह कि वह मन ही मन उनकी उस कमजोरी को समझकर स्वयं को किसी अशुभ प्रतिक्रिया से बचाए रखता। सुधीजनों के लिए दूसरा रास्ता ही हितकर था। हमारे एक मित्र की सलाह थी -'It is not proper to oppose the powerful' वैसे एक सत्य यह भी है कि जो अपने नाम और काम से 'पॉवरफुल' समझे जाते हैं, वे भी यदा-कदा अपनी कमजोरियों का प्रदर्शन कर बैठते हैं। **को न मुह्यात् भूतले !**

एक अनुभवी सन्त-प्रवर का यह कथन दीप-स्तम्भ की तरह किसी को भी अँधेरे में भटकने से बचा सकता है- ''**इस जीवन में जो भी अच्छे या बुरे प्रसंग आयें, उनमें दो वस्तुयें महत्त्वपूर्ण हैं - एक तो समझ और दूसरी क्षमा। कर्म के उदय से जहाँ परिस्थिति बिगड़े, वहाँ स्वस्थता बनाए रखने के लिए समझ चाहिए और जहाँ परिस्थिति के बिगाड़ में किसी व्यक्ति का सीधा हाथ दिखता हो वहाँ प्रसन्नता टिकाए रखने के लिये क्षमा करने की उदारता चाहिए।**'' कोई किसी से द्वेष क्यों करे? जो द्वेषभाव रखते हैं, वे स्वयं अपने से/अपने स्वभाव से दूर होते जाते हैं। कामना तो यही करनी चाहिए कि वे सभी अपने स्वभाव में लौटें, जो कर्मोदयवश जाने या अनजाने उससे दूर हो गए हैं।

जो बाद में छूटना ही है, उसे पहले ही छोड़ देने में बुद्धिमानी है। राग-द्वेष आदि भी सदाबहार तो हैं नहीं, एक न एक दिन तो छूटेंगे ही। अच्छा यही है कि हम पहले से ही उनके चक्कर में न पड़ें। पाण्डवपुराण की यह सूक्ति कितनी सार्थक है- **'गृहीत्वा त्यज्यते यच्च, प्राक् तस्याग्रहणं वरम्'** अर्थात् ग्रहण करके जो वस्तु छोड़नी पड़े, उसे पहले ही न लेना उत्तम है। जब परिस्थिति ऐसी हो कि उसे बदला न जा सके, तब मन:स्थिति को बदलना चाहिए। फिरोजाबाद की घटना के क्रियान्वयन से किसको कौनसा पुण्य अर्जित हुआ, यह सभी सम्बन्धित लोग सोचें, हम व्यर्थ ही इससे चिन्तित होकर क्यों कर्म-बंध करें?

इस घटना से हमारा मन कुछ पलों के लिए हिला तो जरूर है, पर डिगा नहीं है। **वटवृक्ष आँधी आने पर हिल जरूर जाता है, पर अपने मूल स्थान से हटने का नाम नहीं लेता। हमें भी उस वृक्ष जैसा ही बनना चाहिए।** वैशाख के भीषण ताप को सहकर वृक्ष कभी कमजोर नहीं पड़ता। विद्वज्जन भी इस आघात से मजबूत ही होंगे, इसमें हमें किंचित् भी सन्देह नहीं है।

जिस तरह पानी का पिरामिड या रेत का घड़ा नहीं बन सकता, उसी तरह कषायपूरित चित्त में समता-रस नहीं टिक सकता। हम असंभव को सम्भव बनाने के फेर में अपने जीवन के अमूल्य क्षण क्यों नष्ट करें? हम स्वयं को सँभाले रहें, बुद्धिमानी इसी में है।

आइए, सभी वृद्धजन मिलकर एक सन्त की इन प्रेरक एवं अमृतमयी पंक्तियों को नित्य दुहरायें-

'वैर-विरोध? छल-प्रपंच?
दुश्मनी ? दुराचार ?
धोखाधड़ी ? विश्वासघात ?
और वह भी जीवन के अन्तिम पलों में
ना बाबा, ना !
कभी नहीं, कभी नहीं !!
हर्गिज नहीं, हर्गिज नहीं !!!'

१०४, नईबस्ती, फिरोजाबाद,
दूरभाष : (०५६१२) २४६१४६

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भक्तामर-अनुष्ठान : कितना सार्थक ?

ब्र. जयकुमार 'निशान्त'

भक्तामरस्तोत्र सर्वमान्य एवं अत्यन्त लोकप्रिय भक्ति स्तोत्र है, जिसका कारण है सरल बोधगम्य भाषा एवं यंत्र तथा साधना-विधिपूर्वक अनुष्ठान से आधि-व्याधि दूर होने का असीम विश्वास। प्रत्येक छंद विशेष प्रयोजन को दर्शाते हैं। इनका भक्तिभावपूर्वक सस्वर शुद्ध पाठ करने से असातोवेदनीय का क्षय एवं सातारूप संक्रमण होने से मानसिक शांति एवं आरोग्य प्राप्त होता है। यही कारण है कि प्रत्येक श्रावक इसका पाठ नियमित रूप से करता है।

भक्तामर स्तोत्र के लगभग १५० पद्यानुवाद उपलब्ध होते हैं। यह एकमात्र स्तोत्र है जिसका प्राकृत, हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगला, उड़िया, राजस्थानी, अवधी, तमिल, तेलगु, कन्नड़, मलयालम के साथ उर्दू, फारसी, जर्मनी एवं अंग्रेजी भाषाओं में अनुवाद किया गया है।

भक्तामर स्तोत्र की रचना आचार्य मानतुंग ने राजा भोज द्वारा ४८ तालों में बंद कारागृह में की थी। भक्ति की शक्ति से ताले टूटना एवं आचार्यश्री का बाहर विराजमान मिलना भक्ति का चमत्कार था, जिससे जिनशासन की अत्यधिक प्रभावना हुई और राजाभोज ने मिथ्यात्व छोड़कर जैनधर्म स्वीकार कर आत्मकल्याण किया।

भक्तामर विधान के मूल रचनाकार आचार्य सोमसेन स्वामी हैं। इन्हीं के द्वारा रचित पाठ द्वारा अनुष्ठानविधि एवं भक्तामरविधान किया जाता है, जो तीन वलय में ८, १६ एवं २४ काव्यों में वर्णित है। प्रत्येक वलय का अलग-अलग महार्घ्य है। स्थापना पूजा के साथ जयमाला तथा ४८ ऋद्धिमंत्र के अर्घ्य वर्णित हैं।

यहाँ ध्यान देने योग्य है कि आचार्य सोमसेन के पाठ के प्रचलित न होने के कारण उनकी पूजाविधि को ग्रहण करके उनके छंदों के स्थान पर भक्तामर स्तोत्र के छंद जोड़कर मिश्रित विधान का निर्माण किया गया है, जो विशेष अनुष्ठान एवं साधना की दृष्टि से सर्वथा अनुचित है।

मूल संस्कृत पाठ मंत्र-रूप होने के कारण उसके विधिवत् पाठ से मानसिक शांति, आधि-व्याधि का शमन, पर्यावरण शुद्धि, नियमित रूप से होती है। परन्तु पद्यानुवाद से आराधक उस मंत्रशक्ति को प्राप्त नहीं करता जो मूल संस्कृत पाठ से होती है। वर्तमान में तो आचार्य सोमसेन की पूजा और आचार्य मानतुंग स्वामी के मूलपाठ को भी अलग करके केवल पद्यानुवाद से ही पूजाविधि करके विधान किया जाने लगा है, विचारणीय यह है क्या फल मिलेगा इस अधूरे अनुष्ठान से?

वर्तमान में चमत्कारों का विशेष आकर्षण है या कहें कि कामना के वशीभूत होकर धर्माचरण की प्रक्रिया बलवती हो गयी है। आज व्रतोपवास, पूजा-पाठ, अनुष्ठान, भक्तामर पाठ, यहाँ तक कि अष्टाह्निका पर्व, पंचकल्याणक जैसे अनुष्ठान भी प्रदर्शन के माध्यम बन गये हैं। प्रदर्शन की होड़ में हम मूल क्रियाविधि भी भूल गये हैं।

विशिष्ट अनुष्ठान शुभ तिथि, वार, नक्षत्र एवं लग्न में जपसंकल्प, पात्रशुद्धि, सकलीकरण, स्थलशुद्धि, मण्डप प्रतिष्ठा, अभिषेक, शांतिधारा (प्रासुक जल से) पूजन विधान में प्रयुक्त सामग्री का शोधन शुद्ध ताजा घी, धुले धोती दुपट्टे, साड़ी आदि अखण्ड वस्त्र (पेंट शर्ट, पायजामा, सलवार सूट आदि नहीं) एवं चटाई का प्रयोग ही किया जाना चाहिए। रात्रि भोजन का त्याग, ब्रह्मचर्य का नियम, अभक्ष्य पदार्थों का त्याग, संयम साधना, खान-पान की शुद्धि के साथ ही अनुष्ठानविधि फलीभूत होती है। उतावली या शार्टकट क्रिया से कुछ भी मिलना संभव नहीं है। क्रियाविधि की अनभिज्ञता में श्रावक को जितना लाभ नहीं होता, उससे अधिक हानि उठाना पड़ती है।

प्राय: देखा यह जाता है कि पाठ करने वाले भाई-बहन मनशुद्धि, वचनशुद्धि एवं कायशुद्धि की जानकारी न होने के कारण जिन वस्त्रों से लघुशंकादि, भोजन एवं गृहस्थ कार्य करते हैं, उन्हीं वस्त्रों को पहिने हुए पाठ में सम्मलित हो जाते हैं। जबकि धोबी के यहाँ धुले हुए, ड्रायक्लीनिंग किए हुए फैशनेबिल वस्त्र, लिपिस्टिक, नैल पॉलिस, स्प्रे प्रसाधन तथा कोशा एवं सिल्क के वस्त्रों का उपयोग अनुष्ठान में नहीं करना चाहिए। रात्रि जागरण हेतु नवयुवक चाय, कॉफी, दूध, पान मसालों का भी प्रयोग करते हैं। टेंट हाउस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के सामान का प्रयोग भी अधिकांश देखा जाता है, जो उचित नहीं है।

भक्तामर के संस्कृतपाठ का उच्चारण अत्यन्त शुद्ध होना चाहिए। हिन्दी पाठों को भी मूललय में न पढ़कर आधुनिक फिल्मी तर्जों में पढ़ने का फैशन जोर पकड़ रहा है, जिससे धार्मिक प्रभावना की जगह मानसिक विकृति उत्पन्न होती है।

अनुष्ठान में आनेवाले के लिए प्रसाद की व्यवस्था, गिफ्ट आयटम (फोटो, पेन, चाबी छल्ले) का वितरण तथा अनुष्ठान के समापन पर मंत्रित छल्ले, कड़े, अंगूठी, यंत्र आदि प्राप्त करना हमारी किस भावना का द्योतक हैं?

यह सही है कि मंत्रानुष्ठान से सभी वस्तुएं मंत्रित हो जाती हैं, परन्तु उनको पहिनकर कहाँ-कहाँ जाते हैं एवं क्या-क्या करते हैं? मंत्रित वस्तुओं की अवमानना से इसका विपरीत प्रभाव भी देखने में आता है।

विद्वज्जन भी विचार करें! भक्तामर स्तोत्र अलग है तथा भक्तामर विधान अलग है। अनुष्ठान में इन दोनों को साथ-साथ तो पढ़ सकते हैं, किन्तु आधा-आधा अंश लेकर किसी प्रकार अनुष्ठान नहीं किया जाना चाहिए। यदि केवल पाठ करना हो तो भक्तामरस्तोत्र का पाठ करना चाहिए परन्तु अनुष्ठानक्रिया तो सोमसेनाचार्य के विधान पूर्वक करना अनिवार्य है।

अखण्डपाठ की परम्परा किस ग्रन्थ या किन आचार्य के अनुसार सम्पादित की जा रही है? शोध का विषय है।

पुष्प भवन, टीकमगढ़ (म.प्र.)

सर्वोदय जैनविद्या शिक्षणशिविर सम्पन्न

परमपूज्य निर्ग्रन्थाचार्यवर्य, जिनशासन-युग-प्रणेता, अध्यात्म सरोवर के राजहंस, आचार्य परमेष्ठी, आचार्य भगवन् श्री विद्यासागर जी महामुनिराज की परम शिष्या वात्सल्यमूर्ति आर्यिकारत्न मृदुमति माताजी, आर्यिका श्री निर्णयमति माताजी, आर्यिका श्री प्रसन्नमति माताजी, परम विदुषी बा.ब्र. पुष्पा दीदी (रहली) एवं बा.ब्र. सुनीता दीदी (पिपरई) का धर्मप्राण नगरी आष्टा में १४ अप्रैल २००५ को प्रात:काल धर्मप्रभावना के साथ मंगल प्रवेश हुआ। श्रावकों का उत्साह देखते ही बनता था। भोपाल से विहार के बाद प्रत्येक गांव में आष्टा के श्रावक आते रहे। यहां तक कि सीहोर में आष्टा के श्रावकों ने आर्यिका संघ की आगवानी सीहोर प्रवेश पर की। आष्टा के श्रावकों की देव-शास्त्र-गुरु पर अपार श्रद्धा-भक्ति है। विद्यासूत्र एवं भक्तियों पर आर्यिकासंघ के मंगल प्रवचन प्रारंभ हुये। साथ ही महावीर जयंती से ३ मई २००५ तक शिक्षणशिविर का भव्य आयोजन किया गया, जिसमें आर्यिका संघ के द्वारा विभिन्न कक्षाओं का संचालन किया गया। जिसमें सैकड़ों शिविरार्थियों ने बढ़चढ़कर हिस्सा लिया। कक्षाओं में शिविरार्थियों ने बहुत रुचि ली। शिविर की परीक्षा आयोजित की गई, जिसमें शतप्रतिशत शिविरार्थी उत्तीर्ण हुये और उन्होंने बहुत सराहनीय अंक प्राप्त किये।

दिनांक १ मई २००५ को आर्यिकासंघ के सान्निध्य में आष्टा के बड़ेबाबा श्री आदिनाथ भगवान की वेदी पर कलशारोहण का भव्य आयोजन उदासीन-आश्रम इन्दौर के अधिष्ठाता बा.ब्र. अनिल भैयाजी के प्रतिष्ठाचार्यत्व में सानंद सम्पन्न हुआ।

दिनांक १० जून से १२ जून २००५ तक किले अंतर्गत मंदिर के दो शिखरों पर कलशारोहण, चौबीसी के शिखरों पर कलशारोहण एवं त्रिमूर्ति वेदी पर कलशारोहण का भव्य आयोजन आर्यिकासंघ के सान्निध्य में आयोजित भगवन्हुआ।

अतिशयक्षेत्र के समान किले के दिगम्बर जैनमंदिर में अभूतपूर्व धर्मप्रभावना का वातावरण निर्मित हुआ।

आर्यिका संघ का आगमन प.पू. आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से हुआ है। आष्टा के समस्त श्रावक प्रसन्न हैं और भावना भाते हैं कि आचार्यश्री की दृष्टि इसी तरह आष्टा पर हमेशा रहे।

बा.ब्र. अनिल, भोपाल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सज्जातित्व का वास्तविक विवेचन

पं. सुनील कुमार शास्त्री

वर्तमान में सज्जातित्त्व पर बड़ी चर्चायें सुनने में आती हैं। कई पत्र पत्रिकाओं में इस विषय पर लेख भी निरन्तर आते रहते हैं। पू. आर्यिका विशुद्धमति तथा पू.आर्यिका स्याद्वादमति माताजी के ट्रेक्ट भी इस संबंध में प्रकाशित हुये हैं। मुझे सज्जातित्त्व के संबंध में विशेष जानने की जिज्ञासा वर्षों से थी। मैंने जब गौर से उपरोक्त लेख और पुस्तिकाओं को पढ़ा तो पाया कि सज्जातित्त्व पर आगम संबंधी कोई चर्चा उसमें नहीं है। और की बात तो जाने दें, सज्जातित्त्व शब्द की आगमिक परिभाषा तक उसमें नहीं है। इसी कारण यह लेख लिख रहा हूँ ।

आजकल देखने में आता है कि यदि कोई गोलापूर्व जैन भाई, यदि परवार जैन भाई के साथ शादी संबंध कर ले तो उसे जाति संकर तथा सज्जातित्त्व का नाश करने वाला कहा जाता है और उसे मुनि संघों को आहार देने तथा प्रमुख धार्मिक कार्यों से वंचित भी रखा जाता है। यह सब देखकर मैं यह लेख समाज के समक्ष इस आशय से प्रस्तुत कर रहा हूँ कि सज्जातित्त्व के संबंध में समाज को वास्तविकता का परिचय मिल सके।

१. शब्द व्याख्या

क- सज्जातित्त्व सत् +जातित्त्व इन दो शब्दों से मिलकर बना है।

आर्यिका विशुद्धमति जी के अनुसार माता के वंश को जाति कहते हैं और जाति की शुद्धता को सज्जातित्त्व कहते हैं।

ख- आचार्य पूज्यपाद ने सर्वार्थसिद्धि ८/११में जाति की परिभाषा इसप्रकार कही है-'**तासु नरकादि गतिस्व व्यभिचारिणा सादृश्येनैकीकृतोऽर्थात्मा जातिः तन्निमित्तं जातिनामा** ।

अर्थ : उन नरकादि (आदि पद से यहाँ तिर्यन्च,मनुष्य तथा देवगति भी लेना चाहिए) गतियों में जिस अव्यभिचारी सादृश्य से एकपने रुप अर्थ की प्राप्ति होती है वह जाति है और इसका निमित्त जातिनामकर्म है ।

ग- श्री धवला पुस्तक १, पृष्ठ १७-१८ पर कहा है, '**तत्थ जाई तब्भवसारिच्छलक्खण - सामण्णं। ....तत्थ जाइणिमित्तं णाम गो मणुस्स घड पड स्तंभवेत्तादि** ।

अर्थ : तद्भव और सामान्य लक्षण वाले सामान्य को जाति कहते हैं। गौ, मनुष्य,घट,पट,स्तंभ और वैत इत्यादि जाति निमित्तक नाम है.... वे जाति पांच प्रकार की है, एकेन्द्रिय जाति, द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, पंचेन्द्रिय जाति ।

घ- सज्जातित्व शब्द तो शास्त्रों में स्थान-स्थान पर पढ़ने में आता है परन्तु किसी भी आचार्य ने इसकी परिभाषा स्पष्ट नहीं की। सन् २००० में आर्यिका सुपार्श्वमति माताजी का चातुर्मास जयुपर चल रहा था और वे पार्श्वनाथ भवन में विराजमान थीं । मेरे सामने सज्जातित्त्व पर उनकी एक विद्वान से डेढ़ घण्टे तक चर्चा चली । वे विद्वान माताजी से सज्जातित्व की परिभाषा का आगम प्रमाण मांग रहे थे। चर्चा के अन्त में पूज्य माताजी ने स्पष्ट कहा कि, सज्जातित्त्व शब्द की परिभाषा शास्त्रों में कहीं भी नहीं दी गई है। सर्वज्ञ ही जाने । हम तो अपनी गुरु परम्परा का निर्वाह कर रहे हैं। इससे यह स्पष्ट हो गया कि सज्जातित्त्व की वर्तमान में लगाई जाने वाली परिभाषा आगम सम्मत नहीं हैं ।

उपरोक्त संदर्भों से सज्जातित्त्व का यही अर्थ लेना उचित होगा कि जो सदाचरण से युक्त (सप्तव्यसनका त्यागी) तथा नीच व्यापार से रहित है, उसको सज्जातित्त्व गुण वाला मानना या उस परिवार की कन्या से उत्पन्न वंश परम्परा को सज्जातित्त्व गुण से विभूषित मानना चाहिए। खण्डेलवाल-अग्रवाल आदि से यहां जाति का कोई संबंध नहीं जाति के निर्धारण में गुण, कर्म अथवा आकार-प्रकार आदि ही कारण है अर्थात **सभी मनुष्य जाति अपेक्षा से तो एक मनुष्य जाति** के हैं जैसा कि आ. अमितगति महाराज ने कहा है,

ब्राह्मण- क्षत्रियादीनां चतुर्णामपि तत्त्वतः।
एकैव मानुषीजातिराचारेण विभज्यते ॥

अर्थ : ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र यह जातियाँ तो वास्तव में आचरण पर ही आधारित हैं। वास्तव में तो एक मनुष्य जाति ही है।

आचार्य गुणभद्र महाराज ने भी लिखा है,

नास्ति जातिकृतो भेदो मनुष्याणां गवाश्ववत्।

अर्थ : जैसा पशुओं में या तिर्यंचों में गाय या घोड़े आदि का भेद होता है वैसा मनुष्यों में कोई जातिकृत भेद नहीं है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. जाति क्या है ?

हमको यह समझाया जाता है कि जैसवाल जाति अलग है और खण्डेलवाल जाति अलग है। जबकि वास्तविकता यह है कि ये जातियाँ नहीं हैं। जो जैनी भाई जेसलमेर में रहते थे, वे जैसवाल कहलाये । तथा जो खण्डेला में रहते थे वो खण्डेलवाल कहलाये। खण्डेलवाल या जैसवाल तो उनके निवास स्थान को सूचित करने वाले शब्द हैं, जातियां नहीं। यद्यपि यह सत्य है कि अलग-अलग स्थान पर रहने वाले मनुष्यों के खान-पान, ओढ़ाव-पहनाव आदि में अन्तर होता है परन्तु जाति तो उनकी मनुष्य ही है। उसमें अन्तर कैसे माना जाये? आचार्य सोमदेव महाराज ने कहा है,

विप्रक्षत्रियविट्शूद्राः प्रोक्ता क्रियाविशेषतः।
जैनधर्मे पराः शक्तास्ते सर्वे बान्धवोपमाः।।

अर्थ : क्रियाभेद से ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य और शूद्र ये भेद कहे गये हैं । जैन धर्म में अत्यन्त आसक्त हुए वे सब परस्पर भाई-भाई के समान हैं।

आचार्य देवसेन महाराज ने कहा है,

एहु धम्मु जो आयरइ, बंभणु सुद्दवि कोइ।
सो सावहु, किं सावयहं अण्णु कि सिरिमणि होइ।।

अर्थ : इस जैनधर्म का जो भी आचरण करता है वह चाहे ब्राह्मण हो, चाहे शूद्र या कोई भी हो, वही श्रावक (जैन) है। क्योंकि श्रावक के सिर पर कोई मणि तो लगा नहीं रहता। आचार्यों का इतना स्पष्ट उल्लेख मिलने पर भी हम गोलापूर्व और परवार में भिन्न जाति कैसे मानते हैं? वरांग चरित्र में तो आचार्य जटासिंहनन्दी ने तो स्पष्ट कहा है :

फलान्यथोदुम्बरवृक्षजातेर्यथाग्रमध्यान्त भवानि यानि।
रुपाक्षतिस्पर्शसमानि तानि तथैकतो जातिरपि प्रचिन्त्या॥ ४ ॥
ये कौशिकाः काश्यपगोतमाश्च कौडिन्यमाण्डव्यवशिष्ठ गोत्राः।
आत्रेयकौत्साङ्गिरसाः सगार्ग्या मोद्गल्यकात्यायन भार्गवाश्च॥ ५॥
गोत्राणि नानाविधजातयश्च मातृस्नुषामैथुनपुत्रभार्याः ।
वैवाहिकं कर्म च वर्णभेदः सर्वाणि चैक्यानि भवन्ति तेषाम्॥ ६॥

अर्थ : जिसप्रकार सभी उदुम्बर वृक्षों के ऊपर, नीचे और मध्यभाग में लगे हुए फल,रुप और स्पर्श आदि की अपेक्षा समान होते हैं उसीप्रकार एक से उत्पन्न होने के कारण उनकी जाति भी एक ही जाननी चाहिए॥ ४ ॥ लोक में यद्यपि जो कौशिक, काश्यप,गौतम, कौडिन्य, माण्डव्य,वशिष्ठ,आत्रेय, कौत्स, आङ्गिरस, गार्ग्य, मोद्गल्य, कात्यायन और भार्गव आदि अनेक गोत्र, नाना जातियाँ तथा माता, बहु, साला, पुत्र और स्त्री आदि नाना सम्बन्ध, इनके अलग-अलग वैवाहिक कर्म और नाना वर्ण प्रसिद्ध हैं, परन्तु उनके वे सब वास्तव में एक ही हैं॥ ५-६॥

विश्वकोष अधिकार ५, पृष्ठ ७१८ के अनुसार आ० जिनसेन के उपदेश से ८२ गाँव राजपूतों के और २ सुनारों के जैनधर्म में दीक्षित किये गये। उन्हीं से खण्डेलवालों के ८४ गोत्र हुए। क्षत्रिय और सुनार जैन खण्डेलवालों में रोटी-बेटी व्यवहार चालू हो गया, जो कि अभी भी है।

उपरोक्त सभी प्रमाण यह स्पष्ट कर रहे हैं कि जाति की अपेक्षा सभी मनुष्य एक जाति के हैं। गोलापूर्व या परवार आदि भेदों का जाति भेद से कोई संबंध नहीं है।

३. विवाह किससे कौन कर सकता है?

वर्तमान में यदि कोई गोलापूर्व, परवार से शादी कर ले तो हम उस शादी को गलत मान लेते हैं। जबकि जैन शास्त्रों में ऐसी एक भी पंक्ति देखने को नहीं मिलती। आचार्य जिनसेन महाराज ने आदिपुराण में इसप्रकार कहा है-

शूद्रा शूद्रेण वोढव्या नान्या स्वां तां च नैगमः ।
वहेत् स्वां ते च राजन्यः द्विजन्मा क्वचिच्च ताः॥

अर्थ : शूद्र को शूद्र की कन्या से विवाह करना चाहिये, वैश्य-वैश्य की तथा शूद्र की कन्या से विवाह कर सकता है, क्षत्रिय अपने वर्ण की तथा वैश्य और शूद्र की कन्या से विवाह कर सकता है और ब्राह्मण अपने वर्ण की तथा शेष तीन वर्ण की कन्यायों से भी विवाह कर सकता है।

श्री सोमदेव सूरि ने भी नीतिवाक्यामृत में इसी तथ्य का पूर्ण समर्थन किया है। हरिवंशपुराणकार आचार्य जिनसेन ने स्वयंवर द्वारा विवाह में अपनी पूर्ण स्वीकृति इसप्रकार प्रदान की है-

कन्या वृणीते रुचिरं स्वयंवरगता वरं ।
कुलीनमकुलीनं वा क्रमो नास्ति स्वयंवरे।

अर्थ : स्वयम्वरगत कन्या अपने पसन्द वर को स्वीकार करती है, चाहे वह कुलीन हो या अकुलीन । कारण कि स्वयम्वर में कुलीनता अकुलीनता का कोई नियम नहीं होता।

इतना स्पष्ट कथन हुये भी जो लोग कल्पित उपजातियों में (गोलापूर्व, परवार आदि में) विवाह करने में भी धर्म कर्म की हानि समझते हैं, उनको उपरोक्त आगम के अनुसार अपनी धारणा तुरन्त बदल देनी चाहिए।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. आहार देने की योग्यता

कुछ लोग ऐषणा समिति के अन्तर्गत पिण्ड शुद्धि अधिकार का आश्रय लेकर विभिन्न जातियों में वैवाहिक संबंध करने वालों को अयोग्य मानते हैं। जबकि मूलाचार आदि किसी भी ग्रंथ में दायक आदि दोषों के अन्तर्गत अन्तर्जातीय विवाह करने वालों को कहीं भी गलत नहीं बताया गया है। श्रीमूलाचार की अनगार भावना में तो स्पष्ट कहा है -

अण्णादमणुण्णादं भिक्खं णिच्चुच्चमज्झिमकुलेसु।
घरपंतीहिं हिंडति य मोणेण मुणी समादिंति ॥८१५ ॥

अर्थ : वे साधु नीच, उच्च या मध्यम कुलों में गृह पंक्ति से मौन पूर्वक भ्रमण करते हैं और अज्ञात तथा अनुज्ञात भिक्षा को ग्रहण करते हैं।

यही कारण है कि मूलाचार आदि में पिण्डशुद्धि आदि प्रकरण के अन्तर्गत किसी गृहस्थ को जाति या कुल के आधार पर आहार देने के लिए अपात्र नहीं ठहराकर अन्य कारणों से उसे अपात्र ठहराया है। इन सब आगम प्रमाणों पर पक्ष छोड़कर यदि विचार किया जाये तो अन्तर्जातीय विवाह करने वालों को साधु के लिए आहार देने से कैसे वंचित किया जा सकता है। जैन शास्त्र तो अन्य वर्ण वालों को भी, योग्य आचरण होने पर 'उच्च वर्ण वाला' स्वीकार करते हैं। जैसे सागारधर्मामृत में कहा है 'अध्याय २/२२'

शूद्रोप्युपस्कराचारवपुः शुद्धयास्तु तादृशः।
जात्या हीनोऽपि कालादिलब्धौ ह्यात्मास्ति धर्मभाक्॥

अर्थ : कोई शूद्र भी, यदि उसका आसन, वस्त्र, आचार और शरीर शुद्ध है तो वह ब्राह्मणादि के समान है। तथा जाति से हीन (नीच)होकर भी कालादि-लब्धि पाकर वह धर्मात्मा हो जाता है।

५. कुछ शास्त्रीय उदाहरण

क- श्री हरिवंशपुराण सर्ग १४-१५ में एक कथा आती है,जिसके अन्तर्गत कौशाम्बी के राजा सुमुख ने आसक्त होकर वीरक नामक वैश्य की पत्नी वनमाला को अपने महल में बुलाकर उसके साथ शादी कर ली। एक दिन राजा सुमुख और वनमाला ने तपोनिधान वरधर्म नामक मुनिराज को भक्तिभाव से आहार कराया, जिस **उत्तम दान** के फलस्वरुप वे मरकर विजयार्ध पर्वत पर विद्याधर -विद्याधरी हुए।

ख- श्री हरिवंशपुराण सर्ग ४३ में एक कथा इसप्रकार है, राजा मधु ने वटपुर नगर में अपने अन्तर्गत राज्य करने वाले राजा वीरसेन की चन्द्राभा नामक रानी को छलपूर्वक अपने यहाँ बुला लिया। बाद में उसके साथ शादी भी कर ली। बाद में उसने अपनी रानी चन्द्राभा के साथ मुनिराज को आहार देकर पञ्चाश्चर्य प्राप्त किये।

ग- आराधना कथाकोष की ६६वीं कथा के अनुसार, अग्नि नामक राजा ने अपनी कृतिका नामक पुत्री पर आसक्त होकर उससे संबंध स्थापित किया और उससे उत्पन्न कार्तिकेय नामक पुत्र ने एक मुनिराज से मुनि दीक्षा ग्रहण की। ये कार्तिकेय नामक मुनि महान् प्रसिद्ध आचार्य हुए हैं।

घ- सुदर्शनोदय नामक सेठ सुदर्शन की कथा के अनुसार, सेठ सुदर्शन ने मुनि दीक्षा धारण कर ली थी। एक वेश्या ने उनकी सुन्दरता पर रीझकर उनका अपने निवास स्थान पर अपहरण करा लिया। सभी काम चेष्टा करने के बाद भी जब वह हार गई तब उसने विरक्त होकर उन्हीं मुनि सुदर्शन से आर्यिका दीक्षा धारण की ।

उपरोक्त कथानकों पर यदि पूर्वाग्रह छोड़कर विचार किया जाये तो वर्तमान सज्जातित्त्व संबंधी सभी मानी जाने वाली परिभाषाएं चूर-चूर हो जाती हैं। जैन शास्त्रों में तो धर्माचरण के संबंध में उपरोक्त कथानकों के अनुसार अत्यंत उदारता वर्णित है। अतः हमें सज्जातित्त्व की वर्तमान परिभाषा पर अच्छी प्रकार विचार करना चाहिए।

६. क्या अन्तर्जातीय विवाहवालों को आहार देने से वंचित करना उचित है

इस संबंध में यदि विचार करें तो हमें आगम के निम्न प्रमाणों पर अवश्य ध्यान देना होगा।

जातिर्देहाश्रिता दृष्टा देह एव आत्मनो भवः।
न मुच्यन्ते भवात्तस्मात्ते ये जातिकृताग्रहः ॥८८॥
जाति-लिङ्गविकल्पेन येषां च समयाग्रहः।
तेऽपि न प्राप्नुवन्त्येव परमं पदमात्मनः ॥८९॥

अर्थ : जाति देह के आश्रय से देखी गई है और आत्मा का संसार शरीर ही है, इसलिए जो जातिकृत आग्रह से युक्त हैं,वे संसार से मुक्त नहीं होते॥ ८८ ॥ ब्राह्मणादि जाति और जटाधारण आदि लिंग के विकल्परुप से जिनका धर्म में आग्रह है वे भी आत्मा के परम पद को नहीं प्राप्त होते हैं ॥ ८९ ॥

उपरोक्त प्रमाण यह स्पष्ट कर रहा है कि जाति संबंधी आग्रह को जैनधर्म में कोई स्थान नहीं है। फिर भी यदि कोई

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

साधु किसी अन्तर्जातीय विवाह वालों से आहार लेने का विरोध करते हैं या कुछ समाज के बड़े लोग, गोलापूर्व और परवार जाति का आपस में संबंध होने पर, आगम से कोई भी विरोध दिखाई न देने पर भी, उनके दान आदि में बाधा डालते हैं,तो उनको रयणसार ग्रंथ की निम्न गाथा अवश्य देख लेनी चाहिए :

खयकुट्ठसूलमूलो लोयभगंदरजलोदरक्खिसिरो।
सीदुण्हवह्मराई पूजादाणन्तरायकम्मफलं॥ ३३ ॥

अर्थ : किसी के पूजन और दान-कार्य में अन्तराय करने से (रोकने से)जन्म जन्मान्तर में क्षय, कुष्ठ, शूल, रक्तविकार, भगंदर, जलोदर, नेत्रपीड़ा, शिरोवेदना आदि रोग तथा शीत, उष्ण के आताप सहने पड़ते हैं और कुयोनियों में परिभ्रमण करना पड़ता है।

७. संघ परम्परा और आगम परम्परा में श्रेष्ठ कौन है ?

कुछ साधुगण, सज्जातित्त्व की परंपरा का अपनी संघ परंपरा के अनुसार पालन करने में धर्म मान रहे हैं। उनको जानना चाहिये कि यह तो सर्वमान्य सत्य है कि यदि कोई संघ परंपरा या गुरु परंपरा आगम सम्मत न हो तो उसे आगम के अनुसार सुधार कर लेना चाहिए। संघ परम्परा को मार्ग नहीं कहा जा सकता, जबकि आगम परम्परा ही मार्ग है। चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागर महाराज ने अपने दीक्षा गुरु देवेन्द्रकीर्ति महाराज से दीक्षा अवश्य ली थी, परन्तु उनकी परम्पराओं को स्वीकार नहीं किया। अन्त में जब देवेन्द्रकीर्ति महाराज ने चारित्र चक्रवर्ती आचार्य से अपनी पूरी चर्या गलत मानते हुये पुनः मुनिदीक्षा धारण की तब गुरु परम्परा पीछे रह गई और आगम परम्परा का जय-जयकार हुआ। अतः यदि कोई संघ परम्परा आगम के अनुसार उचित नहीं बैठती है तो उसे स्वीकार करने में रन्च मात्र भी हिचक नहीं करनी चाहिए।

मैंने यह लेख बड़ी सद्भावना पूर्वक लिखा है। आशा है सभी पाठकगण, पूर्वाग्रह से मुक्त होकर इस लेख का पठन और चिन्तन करेंगे और अपने विचारों को आगम के अनुसार बनायेंगे।

'वर्णी विचार' का लोकार्पण

सागर (म.प्र.)। ''पूज्य गणेश प्रसार वर्णी संत थे, जिन्होंने अपने कल्याण के लिए तो साधना की ही, परकल्याण और सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए भी अपना जीवन समर्पित कर दिया।'' उक्त उद्गार अवधेश प्रताप सिंह, विश्वविद्यालय, रीवा के कुलपति माननीय डॉ. ए.डी.एन. बाजपेयी ने 'वर्णी-विचार' पुस्तक का लोकार्पण करते हुए व्यक्त किया। डॉ. बाजपेयी श्री गणेशप्रसाद वर्णी, संस्कृत महाविद्यालय, मोराजी, सागर की स्थापना के १०० वर्ष पूरे होने पर आयोजित त्रिदिवसीय समारोह के समापन समारोह पर बोल रहे थे। पूज्य मुनि श्री अजितसागरजी महाराज एवं ऐलक निर्भयसागरजी महाराज के सान्निध्य में शताब्दी-समारोह एवं अखिलभारतवर्षीय दिगंबर जैन विद्वतपरिषद का अधिवेशन आयोजित किया गया। लोकार्पित कृति 'वर्णी विचार' का परिचय देते हुए डॉ. कपूरचन्द जैन खतौली ने कहा कि वर्णीजी द्वारा रचित अधिकांश साहित्य का प्रकाशन हो चुका है, किन्तु उनकी डायरियों का प्रकाशन नहीं हुआ। 'वर्णी विचार' में वर्णीजी की १९३८ की डायरी प्रकाशित की गई है। अन्य वर्षों की डायरियों का प्रकाशन भी शीघ्र होगा, ऐसी आशा है।

'वर्णी विचार' का संपादन ब्र. विनोद जैन और ब्र. अनिल जैन ने किया है। इसका प्रकाशन सिंघई सतीशचन्द्र केशरदेवी जनकल्याण संस्थान, नैनागिरि ने किया है। ज्ञातव्य है कि उक्त संस्थान की स्थापना श्री सुरेश जैन, आई.ए.एस. ने की है। इस संस्थान द्वारा अहिंसा, विश्वशांति, शाकाहार को बढ़ावा देनेवाले अनेक कार्यक्रम तो संचालित हैं ही, साथ ही नैनागिरि में जैन उच्चतर माध्यमिक विद्यालय का संचालन हो रहा है।

यह पुस्तक निम्न स्थानों से प्राप्त की जा सकती है- (१) ब्र. विनोद कुमार जैन, श्री दिगंबर जैन अतिशय क्षेत्र, पपौरा जी जिला टीकमगढ़, म.प्र. (२) श्री सुरेश जैन आई.ए.एस., ३०, निशात कॉलोनी, भोपाल, म.प्र.-४६२ ००३।

डॉ. संगीता जैन, भोपाल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

प्रश्नकर्ता : श्री सतीश जैन, पिपरई

जिज्ञासा : श्री आदिपुराण २४/१६८ के अनुसार जब बिना गणधर की उपस्थिति के, भरत जी के पूछने पर दिव्यध्वनि खिर गई थी, तब फिर भगवान् महावीर के समवशरण में बिना गणधर के क्यों नहीं खिरी?

समाधान : तीर्थंकरों की दिव्यध्वनि गणधर का अभाव होने से नहीं खिरती है। श्री धवला पुस्तक ९, पृष्ठ १२० पर कहा है कि, 'गणधर का अभाव होने से दिव्यध्वनि की प्रवृत्ति नहीं होती है।' अब प्रश्न है कि तो फिर गणधर प्रभु कौन और कैसे बनते हैं? इसके समाधान में कषायपाहुड़ १/७६ में इसप्रकार कहा है-'**सगपादमूलम्मि पडिवण्णमहव्वयं मोत्तूण अण्णमुद्दिस्सिय दिव्वज्झुणी किण्ण पयट्टदे। साहावियादो ।**

प्रश्न : जिसने अपने पादमूल में महाव्रत स्वीकार किया है, ऐसे पुरुष को छोड़कर अन्य के निमित्त से दिव्यध्वनि क्यों नहीं खिरती ?

उत्तर : ऐसा ही स्वभाव है ।'

भावार्थ : भगवान की दिव्यध्वनि सर्वप्रथम उस व्यक्ति की समवशरण में उपस्थिति होने पर होती है, जो अभी तो अव्रती अवस्था में है, परन्तु भगवान का उपदेश सुनकर, महाव्रत स्वीकार करके, गणधर बनने की योग्यता रखता हो। इसको अब प्रथमानुयोग से देखते हैं। आदिपुराण २४/७९ में कहा है कि महाराजा भरत ने प्रार्थना की कि हे भगवन्, तत्त्वों का विस्तार, मार्ग और उसका फल, मैं आपसे यह सब सुनना चाहता हूँ। महाराजा भरत का प्रश्न समाप्त होने पर भगवान की प्रथम दिव्यध्वनि खिरी। (यहाँ यह स्पष्ट है कि उस समय भरत के छोटे भाई वृषभसेन अव्रती अवस्था में उपस्थित थे।) आदिपुराण २४/१७१-१७२ में कहा है, 'उसी समय जो पुरिमताल नगर का स्वामी था, भरत का छोटा भाई था, पुण्यवान, विद्वान, शूरवीर, पवित्र, धीर, स्वाभिमान करने वालों में श्रेष्ठ, श्रीमान्, बुद्धि के पार को प्राप्त अतिशय बुद्धिमान और जितेन्द्रिय था तथा जिसका नाम वृषभसेन था, उसने भगवान् के समीप सम्बोध पाकर दीक्षा धारण की और उनका पहला गणधर हो गया ।' (यहाँ यह स्पष्ट है कि भगवान की प्रथम देशना होने पर समवशरण में अव्रती अवस्था में उपस्थित वृषभसेन ने, भगवान के पादमूल में महाव्रत स्वीकार किया और वे ही प्रथम गणधर बने।)

इसप्रकार भगवान् आदिनाथ के समक्ष की चर्चा देखकर अब भगवान वर्धमान के समक्ष की चर्चा पर विचार करते हैं : श्री वीरवर्धमान चरित (श्री सकलकीर्ति विरचित) में १५/८०-८२ में इसप्रकार कहा है, 'तब इन्द्र ने, बार-बार प्रार्थना करने पर भी दिव्यध्वनि न होने पर अपने अवधिज्ञान से गणधर पद का आचरण करने में असमर्थ मुनिवृन्द को जानकर विचार किया कि , अहो, इन मुनिश्वरों के मध्य में ऐसा कोई भी मुनीन्द्र नहीं है, जो कि अर्हत् मुख कमल से निर्गत सर्व तत्त्वार्थ संचय को एक बार सुनकर द्वादशांग श्रुत की संपूर्ण रचना को शीघ्रकर सके और गणधर के पद के योग्य हो(वास्तविकता यह थी जिसने भगवान् के पादमूल में ही महाव्रत स्वीकार किया है, उसके ही निमित्त से उसको सम्बोधनार्थ प्रथम दिव्यध्वनि होती है । पूर्व दीक्षित मुनिराज गणधर नहीं बनते।)तब वह गौतम ब्राह्मण के पास गया और उनको समवशरण में लाया। समवशरण में प्रविष्ट होकर वहाँ विराजमान भगवान् वर्धमान को उस द्विजोत्तम गौतम ने देखा और श्री वीर वर्धमान चरित्र अधिकार-१६, श्लोक नं० २ से २५ तक के अनुसार भगवान् वर्धमान से विभिन्न प्रश्न पूछते हुये दिव्यध्वनि के द्वारा उपदेश देने की प्रार्थना की।(यहाँ भी गणधर बनने की योग्यता रखने वाले व्यक्ति की अव्रती अवस्था में उपस्थित हो जाने पर प्रथम दिव्यध्वनि हुई।)तब भगवान ने दिव्यध्वनि से उपदेश देना प्रारम्भ किया। ' पश्चात इसी ग्रन्थ के अधिकार-१८, श्लोक नं० १४८-१५० में कहा है कि, 'दिव्यध्वनि सुनकर मिथ्यात्व को छोड़कर प्रबोध को प्राप्त उस गौतम ने अपने दोनों भाईयों तथा ५०० छात्रों के साथ तुरन्त जिनमुद्रा धारण कर ली और प्रथम गणधर कहलाये।'

उपरोक्त दोनों प्रकरणों से यह स्पष्ट होता है कि भगवान् की प्रथम दिव्यध्वनि तो गणधर की अनुपस्थिति में, परन्तु गणधर बनने की योग्यता रखने वाले व्यक्ति की उपस्थिति में ही होती है। उसके होने पर वह व्यक्ति वहीं दीक्षा धारण कर प्रथम गणधर पद को प्राप्त कर लेते हैं। इसीलिए जब तक गणधर बनने की योग्यता रखने वाले गौतम ब्राह्मण समवशरण में नहीं आए तब तक दिव्यध्वनि नहीं खिरी।

प्रश्नकर्ता : श्री पद्मकुमार जैन, बरहन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिज्ञासा : वर्तमान में जम्बूदीप के भरतक्षेत्र में द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि जीवों की संख्या बतायें?

समाधान : द्वितीयोपशम सम्यग्दर्शन उपशम श्रेणी चढ़ने में प्रवृत्त मुनिराजों के ही उत्पन्न होता है। वर्तमान पंचमकाल में भरतक्षेत्र में उपशम श्रेणी आरोहण की योग्यता किसी भी मनुष्य में नहीं है। क्योंकि उपशमश्रेणी का आरोहण प्रथम तीन उत्तम संहननों के होने पर ही संभव है,जबकि पंचमकाल में तीन हीन संहनन ही पाये जाते हैं। अत: जब किसी भी मनुष्य में या मुनिराज में उपशमश्रेणी आरोहण की योग्यता ही नहीं है,तब द्वितीयोपशम सम्यक्त्व किसी भी जीव को कैसे हो सकता है। श्री लब्धिसार २/४२ में इसप्रकार कहा है,'उपशम श्रेणी चढ़ता क्षयोपशम सम्यक्त्व तें जो उपशम सम्यक्त्व होय ताका नाम द्वितीयोपशम है।' अत: उपशमश्रेणी आरोहण की योग्यता किसी भी जीव में संभव न होने के कारण, **वर्तमान पंचम काल में जम्बूदीप के भरतक्षेत्र में द्वितीयोपशम सम्यक्त्वीयों की संख्या शून्य माननी चाहिए।**

प्रश्नकर्ता : सौ० स्मिता जवाहरलाल दोशी, बारामती

जिज्ञासा : उदयावली, प्रत्यावली, अचलावली तथा बन्धावली की परिभाषा बताईये ?

समाधान : आपकी करणानुयोग में विशेष रुचि प्रशंसनीय है। आप यदि करणानुयोग दीपक भाग १, २ व ३ (पं0 पन्नालाल जी साहित्याचार्य द्वारा विरचित) का स्वाध्याय कर लें तो आपके ऐसे सभी प्रश्नों का समाधान हो जायेगा। ये सभी प्रश्न गोम्मटसार कर्मकाण्ड पर आधारित हैं और करणानुयोग दीपक में इनकी परिभाषा इसप्रकार दी है :

उदयावली : आबाधाकाल के अनन्तर प्रथम आवली में स्थित निषेकों की आवली को उदयावली कहते हैं।

प्रत्यावली : उपरोक्त प्रथम आवली के उपरान्त आगे की आवली को द्वितीयावली या प्रत्यावली कहते हैं।

अचलावली : प्रकृतिबंध होने के पश्चात् एक आवली काल तक उन बांधे गये कर्मों की उदय,उदीरणा,अपकर्षण,उत्कर्षण या संक्रमण नहीं होता है। इस आवली को अचलावली अथवा आवाधावली अथवा बंधावली भी कहते हैं।

जिज्ञासा : भवनवासी देवों के क्या विमान नहीं होते, वे भवनों में ही रहते हैं, उनके भवन किसप्रकार के होते हैं ?

समाधान : आपके प्रश्नों का उत्तर तिलोयपण्णत्ति के अनुसार इसप्रकार है, भवनवासी शब्द ही यह बता रहा है कि ये देव भवनों में अर्थात् महलों में निवास करते हैं, विमानों में नहीं। इनके निवास स्थान तीन प्रकार के होते हैं ।

१. भवन : रत्नप्रभा पृथ्वी के खर एवं पंक भाग में जो भवन बने हैं, वे भवन कहलाते हैं।

२. भवनपुर : मध्यलोक में द्वीपसमुद्रों के ऊपर जो भवन बने हैं, वे भवनपुर कहलाते हैं।

३. आवास : तालाब, पर्वत तथा वृक्षादिक के ऊपर जो भवन बने हैं वे आवास कहलाते हैं। असुरकुमार देवों के तो केवल भवनरुप ही निवास स्थान होते हैं,भवनपुर और आवास नहीं होते। अन्य नौ भवनवासी देवों के किन्हीं के तीनों में से कोई भी आवास होते हैं।

इन भवनों की लम्बाई-चौड़ाई जघन्य से संख्यात योजन और उत्कृष्ट से असंख्यात योजन होती है। वे समस्त भवन चौकोर होते हैं, उनकी ऊँचाई ३०० योजन होती है। प्रत्येक भवन में १०० योजन ऊँचा एक पर्वत होता है जिस पर एक चैत्यालय होता है। समस्त भवनों की भूमि और दीवारें रत्नमयी होती हैं। ये भवन अत्यन्त रमणीय, सतत् प्रकाशमान रहने वाले तथा इन्द्रियों को सुख देने वाली चन्दन आदि बस्तुओं से सिक्त होते हैं। भवनवासियों के कुल भवनों की संख्या ७ करोड़ ७२ लाख है। इसीलिए उनसे संबंधित चैत्यालयों की संख्या इतनी ही कही जाती है।

जिज्ञासा : आबाधाकाल किसे कहते हैं और किस कर्म का कितना आवाधाकाल होता है ?

समाधान : बन्ध को प्राप्त कर्मवर्गणायें जब तक उदय एवं उदीरणा रुप होने के योग्य नहीं होती हैं तब तक के काल को आवाधाकाल कहते हैं। जैसे कोई कर्म एक कोड़ाकोड़ी सागर की स्थिति का बांधा गया । वह कर्म १०० वर्ष तक उदय एवं उदीरणा के अयोग्य होता है। तो यह १०० वर्ष का काल आवाधाकाल होगा।

किस कर्म की कितनी आवाधा होती है इसका विचार उदय और उदीरणा की अपेक्षा से दो प्रकार से करेंगे। उदय की अपेक्षा आयुकर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों की आवाधा, एक कोड़ाकोड़ी सागर की स्थिति पर १०० वर्ष के अनुपात से लगानी चाहिये। अर्थात् यदि कोई कर्म १० कोड़ाकोड़ी सागर स्थिति का बंधा है तो वह १००० वर्ष तक उदय में नहीं आएगा, यह उसका आवाधाकाल हुआ। जिन कर्मों की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्थिति अन्त:कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण होती है, उनकी आवाधा अन्तर्मुहूर्त प्रमाण जाननी चाहिए। आयुकर्म की आवाधा, आयुकर्म के बंध के पश्चात् शेष बची हुई भुज्यमान आयु प्रमाण कही गई है। अर्थात् यदि किसी एक करोड़ पूर्व की आयु वाले जीव ने, आयु का त्रिभाग शेष रहने पर आयुकर्म का बन्ध किया तो उस आयुकर्म की आवाधाकाल शेष बचे हुए एक करोड़ पूर्व के त्रिभाग प्रमाण होगी। यह आयुकर्म की उत्कृष्ट आवाधा कहलाती है। आयुकर्म की जघन्य आवाधा, असंक्षेपाद्धाकाल प्रमाण कही गई है।

उदीरणा की अपेक्षा समस्त कर्मों की आवाधा एक आवली प्रमाण होती है अर्थात् बंधी हुई कर्म प्रकृति की एक अचलावली के बाद उदीरणा होना संभव है। विशेष यह है कि आयुकर्म के संबंध में, परभव संबंधी आयु की उदीरणा नहीं होती, मात्र वर्तमान भुज्यमान आयु की उदीरणा ही संभव है।

जिज्ञासा : कासनगाँव क्षेत्र कहाँ है, परिचय दीजिएगा?

समाधान : कासनगाँव अतिशय क्षेत्र अभी नवीन ही प्रसिद्धि में आया है, यह जिला-गुड़गाँव, हरियाणा में स्थित है। दिल्ली-जयपुर हाइवे से गुड़गाँव पहुँचने पर वहाँ से २० कि०मी० दूरी पर स्थित है । क्षेत्र समतल है, सिर्फ एक जिनालय है। २६ अगस्त १९९७ को खुदाई में भगवान् पार्श्वनाथ की ४ तथा भगवान् मल्लिनाथ, मुनिसुव्रतनाथ, अभिनन्दननाथ, अनन्तनाथ तथा आदिनाथ भगवान् की एक-एक प्रतिमा प्राप्त होने से ही यह तीर्थ प्रसिद्धि में आया। ये सभी मूर्तियां १३वीं-१४वीं शताब्दी की अष्टधातु की हैं।

खुदाई में कुछ चरण और यन्त्र भी प्राप्त हुए हैं। सभी मूर्तियां अत्यन्त मनोहर और दर्शनीय हैं । मूर्तियों की विधिवत् शुद्धि एवं प्रतिष्ठा कराके विराजमान करा दिया गया है। प्रतिदिन सैकड़ों यात्री दर्शनार्थ आने से यह क्षेत्र अत्यंत प्रसिद्ध हो गया है।

१/२०५, प्रोफेसर कॉलोनी, आगरा - २८२ ००२

जैन गुरुकुल, मढ़िया जी जबलपुर ने कीर्तिमान रचा

मानवीय गुण प्रेम, वात्सल्य एवं त्याग की शिक्षा से ओतप्रोत श्री वर्णी दिगंबर जैन गुरुकुल जहाँ सिर्फ धार्मिकक्षेत्र में छात्रों को भारतीय संस्कृति के प्रतिरूप नैतिक एवं संस्कारवान् शिक्षा प्रदान कर संपूर्ण जबलपुर का देश भर में सिर ऊँचा कर रहा है, वहीं आज विगत दिनों गुरुकुल में पधारे माननीय मुख्यमंत्री श्री बाबूलाल जी गौर के आशीर्वाद को भी सच में बदल दिया। आज जैसे ही इंटरनेट पर गुरुकुल विद्यालय का मा.शिक्ष मण्डल भोपाल द्वारा घोषित परीक्षा परिणाम देखा, तो इतिहास के नालंदा और तक्षशिला के शिक्षा केन्द्रों की याद ताजा हो गई कि वे छात्रों को नैतिक एवं संस्कारवान शिक्षा ही नहीं प्रदान करते थे, बल्कि जीवन की सच्चाइयों से भी परिचित कराकर लौकिक क्षेत्र में उन्हें मजबूत करते थे। तभी वहाँ से निकला प्रत्येक छात्र जीवन की ऊँचाइयों को अवश्य छूता था। वही इतिहास दुहराने की प्रथम सीढ़ी पर आज गुरुकुल कदम रख रहा है। विद्यालय जहाँ विगत ५ वर्षों से १०० प्रतिशत परीक्षा परिणाम दे रहा है वहीं इस वर्ष विद्यालय के छात्रों ने एक कीर्तिमान रच दिया कि **हायर सेकेण्ड्री परीक्षा में विद्यालय के समस्त छात्रों ने परीक्षा को प्रथम श्रेणी में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण कर गौरवपूर्ण कार्य किया है।** इससे सिर्फ विद्यालय का ही नहीं बल्कि संस्कारवान् शिक्षा प्राप्त करने के सपने संजोने वाले प्रत्येक व्यक्ति का हौसला बुलंद हुआ है। विश्वास उत्पन्न हुआ है कि मात्र आधुनिकता की दौड़ में पाश्चात्य संस्कृति पर आधारित विद्यालय ही नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति को अपने हृदय में संजोए विद्यालय भी जीवन की दौड़ में आगे निकल सकते हैं। छात्रों की इस अभूतपूर्व सफलता से समस्त गुरुकुल परिवार एवं छात्रों के परिवारजन हर्षोल्लसित हैं एवं उन्होंने छात्रों को ढेर सारी बधाइयाँ प्रेषित की हैं तथा उनके स्वर्णिम भविष्य की कामना की है। विद्यालयपरिवार ने भी उन्हें आगे शिक्षा प्राप्त करने तक अपने छात्रावास में रहने की एवं उत्कृष्ट अध्यापन व्यवस्था प्रदान करने की घोषणा की है ताकि आगे जाकर ये छात्र भारतीय प्रशासनिक सेवाओं जैसी देश की सर्वोच्च सेवाओं में आसानी से चयनित हो सकें।

राजेश कुमार जैन,
श्री वर्णी दिगंबर जैन गुरुकुल, पिसनहारी मढ़िया, जबलपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाचार

जैनों के ही नहीं, जन-जन के थे भगवान महावीर त्रिदिवसीय कार्यक्रम सम्पन्न

मण्डला (म.प्र.), २२.०४.२००५। भगवान महावीर केवल जैनों के ही नहीं, बल्कि जन-जन के हैं। उनके संदेश सम्पूर्ण मानवता के कल्याण के लिए हैं। भगवान महावीर को पाकर मानवता गौरवान्वित हुई है। भारतवर्ष को इस बात का गर्व होना चाहिए कि उसने तीर्थंकर भगवान महावीर जैसा प्रज्ञा-पुरुष इस विश्व को प्रदान किया है। भगवान महावीर ने इस धरती के लोगों को ऐसा दर्शन दिया, जिससे प्रत्येक प्राणी को परमात्मा बनने का मौलिक अधिकार प्राप्त हुआ है। सच्चे अर्थों में वे ऐसे क्रांतिदूत थे, जिन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रांति का संदेश देकर जनजागरण का ऐसा शंखनाद किया था कि सारी सृष्टि ने एक असाधारणप परिवर्तन की अनुभूति की थी। उक्ताशय के विचार आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के प्रभावक शिष्य पूज्य मुनि श्री समतासागर जी महाराज ने महावीर जयंती के पावन संदर्भ पर व्यक्त किये। मुनिश्री ने कहा कि भगवान महावीर का मानना था कि मानव क्रोध को शांति से, अभिमान को नम्रता से, माया को सरलता से तथा लोभ को संतोष से जीत सकता है। मानव अपने मन को सदैव वासनाओं से मुक्त रखे, वह अपने जीवन का एक लक्ष्य, एकविचार सुनिश्चित करे। हमारी भारतीय-संस्कृति का इतिहास अत्यंत समृद्ध और सम्पन्न है। भगवान महावीर ने कहा कि प्रेम और करुणा से रहित जीवन श्मशान के समान है। मुनिश्री ने अंत में सम्यक् आहार, विचार, व्यवहार और व्यापार शुद्धि पर जोर देते हुये गांधी जी के तीन बंदरों की व्याख्या की तथा कहा कि भगवान महावीर द्वारा निरूपित यदि 'बुरा मत सोचो' का चौथा बंदर अपने पास होता, तो फिर इन तीन बन्दरों की आवश्यकता ही न पड़ती। शुद्धता के इन सिद्धांतों में चलकर आज भी आदिनाथ, श्रीराम और महावीर जैसा बना जा सकता है। आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज की प्रेरणा व उनके आशीर्वाद से निकटवर्ती ग्राम आमानाला में सकल दिगम्बर जैनसमाज मण्डला द्वारा संचालित दयोदय पशुसेवा सदन दयाधर्म की मिसाल है। इस अवसर पर मुनिश्री समतासागर जी ने लोगों से अपने निरीह अशक्त मूक पशुओं, खासकर गायों को, गौशाला में पहुँचाने का आह्वान किया। पशु-वध रोकने की दिशा में उठाये गये सराहनीय कदम के लिये गौशाला समिति के समस्त पदाधिकारी, ट्रस्टियों को उनके कुण्डलपुर प्रवास के दौरान गुरुवर आचार्यश्री ने मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद प्रदान किया।

इसके पूर्व क्षुल्लक श्री पूर्णसागर जी एवं ऐलक श्री निश्चयसागर जी महाराज ने अपने उद्बोधन में कहा कि आज से २६०५ वर्ष पूर्व ५९९ ई. पूर्व भारतवर्ष के बिहार राज्य स्थित वैशाली गणतंत्र के कुण्डलपुर ग्राम में पिता सिद्धार्थ एवं माता त्रिशला के यहाँ चैत्र शुक्ल त्रयोदशी (तेरस) के दिन भगवान् महावीर ने जन्म लेकर आर्यावर्त भारतदेश को धन्य किया था। अहिंसा के अग्रदूत आदिब्रह्मा तीर्थंकर ऋषभदेव की परम्परा के अंतिम शासननायक के रूप में भगवान महावीर आये। तीर्थंकर महावीर के अवतरित होते ही वसुन्धरा पर सुख-शांति/अमन-चैन की स्थिति निर्मित हुई। आज राष्ट्र में बढ़ती हुई हिंसा, आतंक, युद्ध की विभीषिका अकाल, महामारी, भूकम्प, अतिवृष्टि, अनावृष्टि के वातावरण में अणुबम नहीं, बल्कि भगवान महावीर के अणुव्रत ही सुख-शांति प्रदान कर सकेंगे। वर्तमान को वर्धमान की आवश्यकता है। कार्यक्रम-स्थल पर जैन-जैनेत्तर समुदाय के हजारों लोग उपस्थित थे, जो मुनिसंघ की वाणी का लाभ ले आनंदित हो रहे थे।

मुनिश्री १०८ समतासागर जी, ऐलक श्री १०५ निश्चयसागर जी, क्षुल्लक श्री १०५ पूर्णसागर जी महाराज के सान्निध्य में मण्डला के इतिहास में पहली बार सर्वोदयी जिनशासननायक भगवान महावीर की जन्मजयन्ती जय-जयकारों के उद्घोष के साथ प्रातः ७.३० बजे श्री १००८ शंतिसागर दिगम्बर जैन पंचायती मंदिर, महावीर स्वामी मार्ग, पड़ाव से भव्य शोभायात्रा प्रारंभ हुई, जिसमें आचार्य श्री विद्यासागर दिगम्बर जैन पाठशाला के नन्हें-मुन्ने बालक-बालिकाओं द्वारा मनोज्ञ झांकी, टीलेवाले बाबा एवं जीवन के यथार्थ अंतिम सत्य मृत्यु की वैराग्यताप्रद प्रस्तुति की गई।

महावीरजयंती के त्रिदिवसीय कार्यक्रम में पहले दिन जैनसमाज के युवाओं द्वारा प्रभातफेरी एवं अहिंसा-वाहनरैली निकाली गई। जो दयोदय पशु सेवा केन्द्र गौशाला होते हुए शहर के चारों जिनालयों की वंदना करते हुये ध्वजारोहण के साथ सम्पन्न हुई। अगले दिन जैनसमाज द्वारा दयोदय स्थिति पशुओं के लिए चारा-पानी एवं समुचित आहारदान करते हुए शहर में ठीक ३ बजे भण्डारा कार्यक्रम रखा गया। सांयकालीन आरती, भक्ति एवं स्वाध्याय-सभा सम्पन्न हुई। अंतिम दिन अखिलभारतीय विशाल कविसम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें देश के जानेमाने कवि सम्मिलित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुये।

मुनिसंघ की धर्मप्रभावना का एक बहुत बड़ा आदर्श उपस्थित तब हुआ जब महावीर जयंती की शोभायात्रा और मुनिसंघ की धर्मसभा को शहर के मध्य उदय चौक की बात आई। इस बार मुस्लिम समाज का इस तिथि में ईद का पर्व पड़ जाने के कारण उन्होंने अपनी सभा इसी स्थल पर आयोजित करने की परमीशन प्रशासनिक स्तर पर पहले ही ले ली थी, किन्तु जैनसमाज द्वारा प्रशासन को उस स्थान पर अपना कार्यक्रम दिये जाने पर स्थिति बड़े असमंजस की बन गई। एतदर्थ थाना प्रभारी एवं एस.पी. महोदय ने अपनी सक्रिय भूमिका निभाते हुये दोनों समुदाय के वरिष्ठ नागरिकों से बातचीत में जैसे ही मुनिसंघ की उपस्थिति का संदर्भ आया तो मुस्लिम बंधुओं ने बड़े ही सौहार्दपूर्वक अपने कार्यक्रम के लिए स्थान-परिवर्तन का आशय प्रकट किया और कहा कि महावीर के सिद्धांतों से और जैनमुनियों की तपस्या से हम लोग परिचित हैं उनके प्रति श्रद्धा यही है कि आपका कार्यक्रम उसी स्थान पर सम्पन्न हो। तदानुरूप प्रशासनिक स्तर पर व्यवस्था बनाई गई और दोनों समुदाय के कार्यक्रम जुलूस एक ही रास्ते से निकलते हुए सम्पन्न हुये।

अशोक कौछल

प्रवचनमाला का ऐतिहासिक आयोजन
नयी पीढ़ी को विरासत में केवल धन ही नहीं, धर्म भी प्रदान करें :
मुनि १०८ श्री प्रमाणसागरजी महाराज

राँची। आचार्य श्री १०८ विद्यासागर जी महाराज के प्रभावक शिष्य एवं ओजस्वी वक्ता मुनिश्री १०८ प्रमाण सागरजी महाराज ने तीर्थराज सम्मेदशिखर जी में अल्प प्रवास एवं महती धर्मप्रभावना के उपरांत हजारीबाग, गोमिया, साढ़म, रामगढ़ आदि स्थानों से विहार करते हुए झारखंड की राजधानी राँची में मंगल प्रवेश किया। पूज्य मुनिश्री के साथ ऐलक श्री चेतनसागर जी एवं १०५ श्री सम्यक्त्व सागरजी एवं ब्र. अन्नू भैया, रोहित भैया, राजेन्द्र भैया ने भी मंगल प्रवेश किया। मुनिश्री की अगवानी करने के लिए राजधानी के हजारों जैन एवं जैनेतर लोग उमड़ पड़े। मुनिश्री की अगवानी रांची के लोकप्रिय विधायक सी.पी. सिंह ने की। इस पद-विहार में सैकड़ों लोग मुनिश्री के साथ-साथ सम्मेद शिखर जी से ही चल रहे थे। धीरे-धीरे जैसे मुनिश्री के चरण राँची की ओर बढ़ रहे थे, सैकड़ों की भीड़ हजारों में बदलती जा रही थी। मुनिश्री के नगर-प्रवेश के अवसर पर हजारों पुरुष, महिलायें एवं बच्चे पलकपावड़े बिछाकर अगवानी करने के लिए खड़े हुए थे।

आगमनिष्ठ-चर्या के साधक मुनिश्री प्रमाणसागरजी महाराज अपनी अनूठी प्रवचनशैली एवं शब्द-सौष्ठव के लिए विख्यात् हैं। दिगम्बर जैनपंचायत राँची के तत्वावधान में एक ऐतिहासिक ''दिव्य-सत्संग एवं प्रवचनमाला'' का नौ दिवसीय आयोजन दिनांक १९.०४.२००५ से २७.०४.२००५ तक किया गया। मुनिश्री की मंत्रमुग्ध करदेनेवाली शैली से प्रभावित होकर हजारों जैन-अजैन श्रोताओं की भीड़ उमड़ पड़ी। 'दिव्य सत्संग एवं प्रवचनमाला' के प्रथम दिन ध्वजारोहण समस्त पांड्या परिवार द्वारा एवं आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के चित्र का अनावरण महावीर प्रसाद जी सोगानी द्वारा एवं मंगल कलश-स्थापना श्री माणिक चंद्र जी एवं मोतीलाल जी काला द्वारा किया गया। दीप-प्रज्वलन धर्मचंद जी (अध्यक्ष जैनपंचायत, रांची), प्रदीप वाकलीवाल (मंत्री दिगम्बर जैनपंचायत, रांची), माणिकचंद गंगवाल द्वारा सामूहिक रूप से किया गया।

प्रवचनमाला में नौ दिनों तक मुनिश्री ने विभिन्न दार्शनिक, सामाजिक एवं धार्मिक विषयों पर मंत्रमुग्ध कर देनेवाली शैली में प्रवचन किये। मुनिश्री ने भगवान महावीर के पंच सिद्धांतों को जन-जन के हृदय में आरोपित कर दिया। जैनसंत ने जन-संत बनकर जीवन के गूढ़ रहस्यों को उद्घाटित किया। प्रवचनमाला के दौरान ही भगवान महावीर स्वामी की जन्मजयंती पर एक विशेष धर्मसभा आयोजित की गयी, जिसमें मुख्य अतिथि झारखंड राज्य के मुख्यमंत्री श्री अर्जुन मुंडा रहे। मुख्यमंत्री श्री अर्जुन मुंडा ने पूज्य मुनिश्री से मंगल आशीर्वाद प्राप्त किया एवं गौरव तीर्थराज सम्मेद शिखर के विकास हेतु एक विशेष योजना बनाने पर विचार करने का आश्वासन दिया। उन्होंने कहा कि झारखंडा सरकार जैनसमुदाय के लिए हर प्रकार का सहयोग देने के लिए प्रतिबद्ध है। इसी अवसर पर रीवा विश्वविद्यालय के उपकुलपति श्री ए.डी.एन. बाजपेयी जी भी रीवा (म.प्र.) से पधारे। उन्होंने अपनी विद्वत्तापूर्ण अभिव्यक्ति करते हुए कहा कि मेरी हार्दिक भावना है कि मैं अगला जन्म किसी जैनपरिवार में लूँ। उपकुलपति जी ने भगवान महावीर के अपरिग्रह के सिद्धांत को दुनियाँ के 'हर मर्ज की दवा' बताते हुए कहा कि जैनसमाज को इस सिद्धांत को केवल आदर्श नहीं, आचरण बनाना चाहिए। उन्होंने कहा कि मैं जैनों से नहीं, जैन संतों से प्रभावित होकर जैनधर्म से जुड़ा हूँ।

इस प्रवचनमाला की ख्याति समस्त झारखंड के कोने-कोने में फैल गयी। नौदिवसीय कार्यक्रम में प्रत्येक दिन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

झारखंड सरकार के विभिन्न मंत्रियों ने उपस्थित होकर मुनिश्री से आशीर्वाद प्राप्त किया एवं प्रवचन श्रवण किया। इनमें झारखंड सरकार के मुख्यमंत्री श्री अर्जुन मुंडा, सुदेश महतो (गृह मंत्री), इन्दरसिंहजी नामधारी (विधानसभा अध्यक्ष), बाबूलाल जी मरांडी (भूतपूर्व मुख्यमंत्री), जलेश्वर महतो (पेयजल एवं स्वच्छता मंत्री), चंद्रप्रकाश चौधरी (भू-राजस्व मंत्री), रमेशसिंह मुंडा (समाजकल्याण मंत्री), हरिनारायण राव (वन मंत्री) आदि मुख्य रूप से उपस्थित हुए। केन्द्रीय खाद्य एवं प्रसंस्करण मंत्री श्री सुबोधकांत सहाय भी पूज्य मुनिश्री के दर्शनार्थ पधारे एवं मंगल आशीर्वाद प्राप्त किया। दर्शनार्थियों में झारखंड जैन न्यास बोर्ड के अध्यक्ष ताराचंद जी देवधर भी पधारे। उन्होंने झारखंड राज्य के समस्त जैनतीर्थों के विकास हेतु मुनिश्री से चर्चा करते हुए निर्देश प्राप्त किये। इस आयोजन को सफल बनाने में दि. जैन पंचायत राँची के नवयुवकों ने अथक श्रम किया। श्री अरुण गंगवाल (कोषाध्यक्ष जैन पंचायत राँची) एवं निर्मल रारा (सहमंत्री श्री दि. जैन पंचायत रांची) के प्रयास विशेष सराहनीय रहे। इस भव्य आयोजन का मंचसंचालन राष्ट्रीय जैनकवि श्री चंद्रसेन जैन ने किया। मंगलाचरण पं. पंकज जैन 'ललित' राँची ने किया।

महावीर जयंती पर आयोजित विशेष धर्मसभा में मुख्यमंत्री अर्जुन मुंडा मुख्य अतिथि के रूप में पधारे। उन्होंने मुनिश्री प्रमाणसागरजी से लम्बी चर्चा के उपरांत मंच से जनसमुदाय को संबोधित करते हुए कहा कि **तीर्थराज सम्मेद शिखर में चौपड़ा कुंड स्थित दि. जैनमंदिर किसी भी हालत में नहीं तोड़ा जायेगा। इसे विधि प्रक्रिया के अनुसार संरक्षित किया जायेगा।**

पंकज जैन 'ललित', राँची

मूकमाटी आधारित प्रवचन

अजमेर १ मई २००५। परमपूज्या आर्यिकारत्न १०५ श्री पूर्णमति माताजी ने परमपूज्य आचार्य १०८ श्री विद्यासागर जी महाराज की महान कृति 'मूकमाटी' महाकाव्य के आधार पर अपने मंगल उद्बोधन में कहा कि इस संसार में रहनेवाले सभी प्राणियों का जन्म व मरण होता है, लेकिन जन्म व मृत्यु के दोनों छोरों के बीच जिन्होंने अपने जीवन के निर्माण की ओर ध्यान दिया, उनका जीवन सार्थक हो जाता है। देखा गया है कि जड़ की पसंदगी में सबकी मास्टरी है, लेकिन जीव की पसंदगी में घोटाला-ही-घोटाला है। इस दुविधा के कारण दुनिया का परिचय व समझ सबको है, लेकिन अपने स्वयं का परिचय व स्वयं की समझ कुछ को ही है। मोटरगाडी रखनेवालों को ड्राइवर में तथा ऑफिस वालों की स्टाफ में रुचि नहीं रहती। अपने शारीरिक सौन्दर्य को निखारने में अधिकांश लोगों की रुचि ब्यूटीपार्लर की बनी रहती है, लेकिन अपने शीलरूपी श्रृंगार हेतु तप, त्याग आदि में रुचि विरलों की ही होती है। जड़ के मामले में जो उत्साह व उमंग तथा समय लगाया जाता है, वैसा उत्साह व उमंग आत्म-तत्त्व के लिये नहीं रहता तथा अक्सर समय के अभाव का रोना रोया जाता है। उन्होंने बताया कि ज्ञानी की रुचि परमार्थ की ओर रहती है, जबकि अज्ञानी की संसार की ओर। फिर भी यह कैसी बात है, कि दोनों संसार में रहते नहीं। ज्ञानी संसार में रहते हुए अपने आप में लीन रहता है, जबकि अज्ञानी संसार में रहते हुये संसारको अपने आप में रखता है। अज्ञानी-व्यक्ति का ध्यान जहां राग की ओर रहता है, वहां ज्ञानी की रुझान वैराग्य की ओर रहती है। जितना समय मन-वचन-काय से जड़ की ओर लगाया जाता है, उसका एक बहुत छोटा-सा भाग अपने आत्म-तत्त्व की ओर लगाने को उन्होंने श्रेयस्कर बतलाते हुये कहा कि परिवर्तनशील संसार में रहते हुये जिन्होंने समय को अपनी मुट्ठी में कर लिया और अपने आत्म-कल्याण की ओर अग्रसर हुये, उन्हें मुक्तिधाम की ओर बढ़ने से कोई नहीं रोक सकता। एक मूर्ख को समझाना सहज है, पागल को भी समझदार बनाया जा सकता है, मंदबुद्धि को भी मेघा/बुद्धि दी जा सकती है, लेकिन एक दुर्जन को बुद्धिमान व समझदार बनाना कठिन है। दुर्जन का काम तो सज्जनों की टांग खेंचना व अच्छे कार्यों में रोडा डालने का रहता है। बिल्ली तो इंसान का कभी ही रास्ता कांटती है, लेकिन दुर्जन-व्यक्ति सज्जनों का बार-बार रास्ता काटते हैं। एक उल्लू के कारण ही परेशानी का आलम रहता है, फिर सोचो-हर शाख पर उल्लू बैठा हो तो अंजाम गुलिस्तां क्या होगा? जिन्हें देव, शास्त्र, गुरु का आशीर्वाद हो तथा अपने गुरु का सम्बल हो, उन्हें ऐसे दुर्जनों से घबराने की जरूरत नहीं है, क्योंकि गुरु के मंगल आशीर्वाद से उनके पवित्र मन व संस्कारों के कारण उनके सभी काम निर्विघ्न पूर्ण होते देखे गये हैं।

कुंडलपुर में विराजमान आचार्य १०८ श्री विद्यासागर जी महाराज, जिनकी दीक्षा का सौभाग्य अजमेर नगर को मिला एवं उनके गुरु आचार्य १०८ श्री ज्ञानसागरजी महाराज ने एक कुशल जौहरी की तरह हीरे को परखकर उन्हें ऐसा तराशा कि अपनी मृत्यु के पूर्व उन्होंने अपने इस शिष्य को ही अपना गुरु बना लिया। अपने उत्कृष्ट साहस व साधना के बल पर आज आचार्य १०८ श्री विद्यासागर जी महाराज के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हजारों शिष्य भारत वसुंधरा में स्थान-स्थान पर धर्म की ध्वजा फहरा रहे हैं और लाखों लोगों को सन्मार्ग में चलने का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। उन्हीं आचार्यश्री को नमन करते हुये उन्होंने बतलाया, कि आचार्य विद्यासागर दीक्षा-स्थली पर स्मृति-स्तूप की अपेक्षा अपने गुरु आचार्य १०८ श्री ज्ञानसागर ध्यान केन्द्र के निर्माण का आशीर्वाद प्रदान कर आचार्यश्री ने अपने गुरु के प्रति अपने श्रद्धा के भावों को प्रस्फुटित किया। आर्यिकाश्री ने जात-पात व पंथ व्यामोहों से दूर रहकर सभी को इस मंगलमय पुनीत कार्य में अपना सहयोग प्रदान कर अपना जीवन धन्य करने का आशीर्वाद प्रदान किया। इस संबंध में प.पू.मुनिपुंगव १०८ श्री सुधासागरजी महाराज का मंगल आशीर्वाद भी प्राप्त हो गया है। इसे हजारों वर्षों तक अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये इस कार्य को अक्षय तृतीया दिनांक ११ मई २००५ का दिन शुभ बतलाते हुये शिलान्यास का आशीर्वाद भी प्राप्त हो गया है।

प्रवचन से पूर्व केसरगंज में कुछ दिन पूर्व स्थापित धार्मिक पाठशाला का नामकरण "आचार्य १०८ श्री विद्यासागर पाठशाला" उद्घोषित किया गया।

हीराचन्द जैन

श्रमण-संस्कृति संस्थान, सांगानेर द्वारा महाराष्ट्र में ५० स्थानों पर शिक्षणशिविर सम्पन्न

श्रमण-संस्कृति संस्थान, सांगानेर द्वारा इस वर्ष चारित्र-चक्रवर्ती आ. शान्तिसागरजी महाराज के ५०वें समाधि वर्ष के उपलक्ष में 'जिनभाषित' अप्रैल २००५ पिछले माह के पृष्ठ पर छापे गये ५० स्थानों पर 'सर्वोदय ज्ञान संस्कार एवं आध्यात्मिक शिक्षणशिविरों का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया। सर्वप्रथम संस्थान में अधिष्ठाता महोदय श्रीमान पं. रतनलाल जी बैनाड़ा ने दिनांक १८ अप्रैल २००५ से २८ अप्रैल २००५ तक बारामती में शिविर लगाया। जिसमें बालबोध, छहढाला, तत्त्वार्थसूत्र एवं समयसार का अध्ययन कराया गया। इस वर्षा की एक प्रमुख विशेषता यह रही कि छतरपुर के योगाचार्य पं. फूलचन्द जी जैन द्वारा प्रतिदिन प्रातः ५.४५ से ६.४५ तक योग का प्रशिक्षण भी दिया गया। शिविर में सभी शिविरार्थियों ने अत्यंत मनोयोग से भाग लिया। शिविरार्थियों की संख्या लगभग २५० रही। यहाँ से अधिष्ठाता महोदय व सभी विद्वत्गण कार द्वारा कोपरगाँव (महाराष्ट्र) चले गये, जहाँ दिनांक ३० अप्रैल से ११ मई २००५ तक बालबोध, छहढाला एवं तत्त्वार्थ सूत्र के साथ-साथ गोम्मटसार जीवकाण्ड के संक्षिप्तस्वरूप करणानुयोग दीपक भाग-१ पर चालीस शिविरार्थियों द्वारा अच्छी तरह अध्ययन किया गया। इस कथा को स्वयं अधिष्ठाता श्रीमान् रतनलाल बैनाड़ा ही लेते थे। शिविर में लगभग २५० शिविरार्थियों ने भाग लिया। यहाँ भी प्रातः ४५ मिनिट का योग का प्रिशिक्षण दिया जाता था जो बारामती-प्रवासी डॉ. सुधीरकुमार शास्त्री ने दिया। दिनांक १ जून से १० जून २००५ तक औरंगाबाद (महाराष्ट्र) में प्रथमवार शिविर आयोजित किया गया, जिसमें लगभग ३५० शिविरार्थियों ने भाग लिया। औरंगाबाद में इस प्रकार का यह अद्भुत शिक्षणशिविर रहा, जिसकी सम्पूर्ण समाज ने बहुत सराहना और प्रशंसा की। इस शिविर में अधिष्ठाता महोदय के अलावा संस्थान के अन्य शास्त्री एवं आचार्य से शिक्षा प्राप्त विद्वानों ने प्रशिक्षण दिया। इनके अलावा ४७ अन्य जिला एवं तहसील स्तर पर शिविर लगाये गये, जिनमें आगम-ग्रन्थों का स्वाध्याय, स्तोत्र व पूजाओं के अर्थ सिखाये गये। विभिन्न स्थानों में छात्रावास व संस्थान को लगभग २ लाख रुपये सहायता-बतौर भी प्राप्त हुये। अनेक स्थानों में साधर्मी भाईयों ने उनसे यहाँ प्रतिवर्ष इसी प्रकार शिविर लगाने का अनुरोध किया है, जिसे श्रमण-संस्कृति संस्थान में आयोजकों ने सानन्द स्वीकार किया है। आशा है वर्ष २००६ में महाराष्ट्र में लगभग १०० स्थानों पर शिक्षणशिविरों का आयोजन किया जायेगा।

छात्रावास के भूतपूर्व छात्र एवं वर्तमान में बारामती-प्रवास कर रहे डॉ. सुधीरकुमार जैन शास्त्री ने महाराष्ट्र के उपरोक्त समस्त स्थानों पर अत्यंत परिश्रम करके शिक्षण-शिविरों का आयोजन निश्चित किया था। उनके अथक प्रयास की समस्त समाज ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। श्रमण-संस्कृति संस्थान ने भी उनका अभिनन्दन करने की योजना बनाई है।

श्री अ.भा.दि. जैन विद्वतपरिषद् का २६वां अधिवेशन सम्पन्न

सागर (म.प्र.), यहाँ पू. क्षुल्लक श्री गणेशप्रसादजी वर्णी द्वारा संस्थापित श्री सत्तर्क तरंगिणी दि. जैन पाठशाला (वर्तमान नाम श्री गणेशप्रसाद दि. जैन संस्कृत महाविद्यालय) के शताब्दी समारोह के मध्य अक्षयतृतीया पर्व के शुभावसर पर पू. वर्णीजी की प्रेरणा से वीरशासन जयन्ती सन् १९४४ में संस्थापित श्री अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वतपरिषद् साधारण सभा का २६ वां अधिवेशन दिनांक ९ से ११ मई २००५ तक संतशिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के सुशिष्य मुनिश्री १०८ अजितसागर जी महाराज एवं ऐलक श्री १०५ निर्भयसागर जी महाराज के सान्निध्य में प्रो. डॉ. फूलचन्द जैन 'प्रेमी' की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। अधिवेशन का सफल संचालन डॉ. सुरेन्द्रकुमार जैन (मंत्री, विद्वतपरिषद्) ने किया। अधिवेशन में जैनागम के प्रख्यात् विद्वान सर्वश्री डॉ. नंदलाल जैन (रीवा), डॉ. भागचन्द्र 'भास्कर' (नागपुर), डॉ. शीतलप्रसाद जैन (जयपुर), डॉ. नेमीचन्द्र जैन (खुरई), डॉ. कमलेशकुमार जैन (वाराणसी), पं. अमरचन्द जैन (सतना), डॉ. कपूरचन्द जैन (खतौली), डॉ. नरेन्द्रकुमार जैन (सनावद), डॉ. विमला जैन (फिरोजाबाद), डॉ. गोपाललाल अमर (दिल्ली), पं. सुखपाल जैन (दिल्ली), पं. निर्मल जैन (सतना), पं. कोमलचन्द जैन (टीकमगढ़), पं. विनोद जैन (रजबांस), डॉ. कस्तूरचन्द 'सुमन' (श्री महावीर जी), पं. पवन दीवान (मोरेना) आदि द्विशताधिक विद्वान/विदुषियाँ सम्मिलित हुए। इस अवसर पर श्री गणेश दिगम्बर जैन संस्कृत महाविद्यालय (सागर) के स्नातकों का सम्मेलन आयोजित किया गया। स्थानीय विद्वानों पं. दयाचन्द्र जैन, पं. मोतीलाल जैन (प्राचार्य), पं. ज्ञानचन्द जैन, पं. विजय कुमार जैन, पं. मनोज कुमारजैन, पं. शीतलचन्द्र जैन, पं. शिखरचन्द जैन, ब्र. साधना जैन, ब्र. पुष्पा जैन आदि की महती सहभागिता रही।

अधिवेशन एवं शताब्दी-समारोह के मध्य चले वैचारिक-संगोष्ठी क्रम में विद्वानों ने पू. क्षुल्लक श्री गणेश प्रसाद जी वर्णी के व्यक्तित्व-कृतित्व एवं जैनधर्म, समाज एवं शिक्षा के क्षेत्र में उनके अवदान के प्रति गहन आस्था एवं कृतज्ञता व्यक्त करते हुए उनके प्रति हार्दिक श्रद्धांजलि व्यक्त की। अधिवेशन में डॉ. नरेन्द्रकुमार जैन (सनावद) ने मंदिरों में प्राप्त आय की दसप्रतिशत राशि प्रतिवर्ष मूलग्रन्थों के प्रकाशन पर व्यय करने तथा नियमित पाठशाला के संचालन की पुरजोर अपील की। जैनसमाज को धार्मिक अल्पसंख्यक घोषित करने, म.प्र. शासन द्वारा पूर्व में घोषित संस्कृत विद्वानों की श्रेणी में प्रतिवर्ष आचार्य समन्तभद्र दिवस मनाने, नगरीय निकायों द्वारा मांस विक्रयकेन्द्रों को मूल-बाजार से अलग रखने, गिरनार तीर्थक्षेत्र पर जैन धर्मावलम्बियों को जैनरीति से पूजन-अर्चन करने की व्यवस्था सुनिश्चित करने, फरवरी २००६ में आयोजित होनेवाले श्री गोम्मटेश्वर बाहुबली महामस्तकाभिषेक के आयोजन को सफल बनाने एवं प.पू. मुनिपुंगव श्री सुधासागर जी महाराज की प्रेरणा से श्रमण-संस्कृति परीक्षा-बोर्ड (सांगानेर) से जैन पाठशालाओं/विद्यालयों से सम्बद्ध करने की अपील की। प्रशासनिक सहयोग की भी अपील की गयी।

शताब्दी-समारोह का उद्घाटन डॉ. डी.पी. सिंह (कुलपति डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर) एवं समापन के अवसर पर सम्मान-समारोह का मुख्यातिथ्य डॉ. डी.बी. सिंह (कुलपति अबधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा) ने ग्रहण किया। अध्यक्षता श्रीमान् सेठ डालचन्द जैन (पूर्व सांसद) ने की। संचालन श्री कान्तकुमार सराफ (मंत्री) ने किया। अस्वस्थता के कारण म.प्र. के राज्यपाल श्री बलराम जाखड़ नहीं आ सके; उन्होंने अपनी लिखित शुभकामनाएं प्रेषित की। मंगलाचारण पं. लालचन्द्र राकेश ने किया।

अधिवेशन ने श्री गणेश दिगम्बर जैन संस्कृत महाविद्यालय (सागर) शताब्दी-समारोह स्मारिका, डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन 'भारती' (बुरहानपुर) द्वारा लिखित एवं विद्यारत्न डॉ. नरेन्द्रकुमार जैन (सनावद) द्वारा सम्पादित कविता-संग्रह 'अत्र कुशलं तथास्तु' एवं टॉप-टेन (विचार सूक्त), ब्र. विनोद द्वारा संकलित 'वर्णी विचार', प्रो. हीरालाल पाँडे द्वारा रचित 'जय सन्मति' (महाकाव्य) एवं सम्पादित कृति 'वर्णी वन्दनाकाव्यम्' का विमोचन किया गया। इन पुस्तकों के साथ विद्वानों को वैरिस्टर चम्पतराय द्वारा लिखित सर्वधर्म समभाव, 'असहमत संगम' एवं पं. पद्मचन्द्र जैन (दिल्ली) द्वारा लिखित 'मूल जैनसंस्कृति अपरिग्रह' वीरसेवामंदिर एवं शकुन प्रकाशन के सौजन्य से भेंटस्वरूप प्रदान की गयीं।

समारोह के समापन पर सभागत द्विशताधिक विद्वानों का शाल, श्रीफल, सम्मानपत्र, स्मृति-चिन्ह एवं सम्मान-राशि के साथ सम्मान किया गया। समारोह के गरिमामय आयोजन में स्थानीय श्री पूरनचंद जैन (अध्यक्ष), प्रो. क्रान्तकुमार सर्राफ (मंत्री), डॉ. जीवनलाल जैन, श्री शिखरचंद जैन,चौ. ऋषभ कुमार जैन, श्री गुलाबचन्द जैन आदि का महनीय योगदान रहा। शताब्दी-समारोह के प्रथम चरण में श्री समवमरण मण्डल विधान का दिनांक ७ से ९ मई तक श्री वर्णी भवन, मोराजी, सागर में आयोजन किया गया। शताब्दी-समारोह के सफल आयोजन की सागर समाज ने प्रशंसा की।

डॉ. सुरेन्द्रकुमार जैन, बुरहानपुर

अतिशयक्षेत्र कोल्हुआ पहाड़ जी पर वेदी शुद्धि एवं जिनबिम्ब स्थापना

बिहार में गया के निकट स्थित गोल्हुआ पहाड़ अतिशय क्षेत्र पर दिनांक ११.५.२००५ बुधवार को अक्षय तृतीया के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पावन अवसर पर पूज्य मुनि श्री १०८ प्रमाणसागरजी महाराज के मंगल आशीर्वाद से वेदी-शुद्धि एवं १००८ श्री पार्श्वनाथ भगवान की जिनबिम्ब स्थापना की गयी।

ज्ञातव्य है कि कोल्हुआ पहाड़ पर अनेक प्राचीन जैन प्रतिमायें एवं जैन शिलालेख उत्खनन में एवं चट्टानों में प्राप्त हुए हैं। यह क्षेत्र पुरातात्विक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। कुछ समय पहले दुर्भाग्यवश मंदिरजी से मूलनायक भगवान की प्रतिमा कुछ असामाजिक तत्वों द्वारा चोरी कर ली गयी थी।

संस्थान गौरव श्री राहुल जैन एवं श्री अरविन्द श्रीवास्तव आई.ए.एस. में चयनित सम्मान व आशीष

सत्र २००५ में यूपीएससी द्वारा आयोजित चयन-साक्षात्कार में संस्थान से संबद्ध श्री राहुल जैन एवं संस्थान के लोक-प्रशासन विषय के प्रशिक्षक श्री अरविन्द श्रीवास्तव आई.ए.एस में चयनित हुए हैं, जो संस्थान व नगर के लिए गौरव का विषय है।

उक्त चयनित द्वय श्री राहुल जैन एवं श्री अरविन्द श्रीवास्तव के सम्मान में संस्थान-परिसर में दिनांक २६.०५.२००५ दिन गुरुवार को संध्या ७ बजे सम्मान व आशीष समारोह का आयोजन किया गया। आयोजन में संस्थान के पदाधिकारीगणों सहित जैनपंचायतसभा, श्री पिसनहारी मढ़िया क्षेत्र कमेटी, श्री गुरुकुल कमेटी, श्री ब्रह्म. विद्या आश्रम व समाज एवं नगर के अनेकों गणमान्य उपस्थित हुए।

श्री राहुल जैन ने कहा कि- ''प.पू. १०८ आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज का आशीष एवं संस्थान का सद्भाव मेरी सफलता का मुख्य आधार है। मैं अपने सेवाकाल में पूज्य गुरुवर द्वारा बताये मार्गों पर चल सकूँ तथा संस्थान व समाज के गौरव बढ़ाने की दिशा में निष्ठा व लगन से कार्य करता रहूँ तो अपने को धन्य मानूँगा।'' आपने अपनी सफलता में स्वयं के कठोर परिश्रम का वर्णन करते हुए अपने परिवार को भी अपनी सफलता की नींव बताया।

श्री अरविन्द श्रीवास्तव, जो कि जिला एवं सत्र न्यायाधीश श्री ए.एन.एस. के सुपुत्र हैं एवं संस्थान के लोक-प्रशासन के प्रशिक्षक हैं, ने कहा कि- ''परिश्रम व पुरुषार्थ करने में मैंने कोई कमी-कसर नहीं रखी थी, लेकिन मेरी सफलता के पीछे मेरे पिताजी का कड़ा अनुशासन, माताजी का वात्सल्य एवं बहिन की प्रेरणा के अतिरिक्त संस्थान का भरपूर सहयोग मेरी सफलता के स्वर्णिम पृष्ठ हैं। मुझे आई.ए.एस. की तैयारी के दौरान संस्थान में लोक-प्रशासन विषय के प्रशिक्षण का दो वर्षों तक का अवसर मिला है। मैं संस्थान की प्रबंध-समिति के प्रति व जिन प्रशिक्षार्थियों को पढ़ाया है उन्हें मैं कभी विस्मृत नहीं कर पाऊँगा।''

सम्मान-समारोह का आतिथ्य माननीय श्री ईश्वरदास रोहाणी (म.प्र. विधानसभा अध्यक्ष), माननीय श्री राकेश सिंह जी (सांसद) एवं माननीय श्री शरद एडवोकेट (विधायक) द्वारा किया गया।

अजित जैन

असम बोर्ड की मैट्रिक की परीक्षा में श्री दिगम्बर जैन विद्यालय, गुवाहाटी की शानदार सफलता

हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी मैट्रिक की परीक्षा में श्री दिगम्बर जैन विद्यालय, गुवाहाटी (श्री दिगम्बर जैन पंचायत, गुवाहाटी द्वारा संचालित) ने शत-प्रतिशत सफलता प्राप्त करके एक नवीन कीर्तिमान स्थापित किया है। इस वर्ष इस विद्यालय से कुल ७६ परीक्षार्थी परीक्षा में बैठे थे, जिसमें से सभी ने अच्छे अंकों से सफलता प्राप्त की।

कपूरचन्द जैन पाटनी

कांकरोली में विद्या-सुधा गुणाभिवंदन पुस्तक का विमोचन

अजमेर, २८ मई २००५। परमपूज्य संतशिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के परम शिष्य मुनिपुंगव १०८ श्री सुधासागर जी महाराज ससंघ के पावन सान्निध्य में दिनांक १५.०५.०५ से २०.०५.०५ तक कांकरोली में नूतन जिनालय की प्रतिष्ठा हेतु आयोजित पंचकल्याणक महामहोत्सव के अंन्तर्गत दिनांक १७ मई २००५, जन्मकल्याणक शुभ दिवस को श्री दिगम्बर जैन ज्ञानोदय महिला समिति अजमेर की अध्यक्षा श्रीमती सुशीला पाटनी धर्मपत्नी श्री अशोक पाटनी (आर.के. मार्बल्स मदनगंज) की प्रेरणा से महामंत्री श्रीमती निर्मला पांड्या द्वारा सम्पादित पुस्तक ''विद्यासुधा गुणभिवंदन'' का विमोचन श्रीमती मुन्नी देवी (धर्मपत्नी स्व. श्री राजेन्द्र गदिया, मातुश्री ज्ञानचंद गदिया सूरत-प्रवासी अजमेर) के करकमलों से हुआ। इस अवसर पर श्रीमती प्रेमलता गंगवाल (तिलक मार्बल मदनगंज) की ओर से उस दिन स्टालों पर घटी हुई दरों पर पुस्तक विक्रय हेतु उपलब्ध कराई गयी।

हीराचन्द जैन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्मनिष्ठ श्रावक श्री चम्पालाल जैन का देहावसान

'व्यापार समाचार' पाक्षिक के सम्पादक आदरणीय भइया श्री चम्पालाल जैन, कपड़ा कमीशन-एजेण्ट, माधोगंज, ग्वालियर, पंचपरमेष्ठी का स्मरण करते हुए देह त्यागकर परलोक प्रयाण कर गये। आप योग-विद्या के प्रसारक, परम स्वाध्यायी, कर्मठता के प्रतीक, पर-दुःख-कातर, ग्वालियर नगर के सेवा-भावी व्यक्ति थे।

अतिसाधारण परिवार में जन्म लेकर उच्च शिक्षा के अभाव में भी आपने निरन्तर स्वाध्याय और अपनी कर्मठता के बल पर समाज में अपना शीर्ष स्थान बना लिया था। १९२० ई. में शमशाबाद (विदिशा, म.प्र.) के साधारण किन्तु धर्म-संस्कारी परिवार में जन्म लेकर आप व्यवसाय हेतु ग्वालियर आये और ईमानदार व्यवसायी के रूप में प्रतिष्ठा अर्जित कर ली। प्रातः २ घण्टे प्राणायाम व योगासान करना और कराना, नित्य अभिषेक पूजन व प्रतिदिन २ बार सामूहिक स्वाध्याय करना, साधर्मी और सहकर्मी बन्धुओं की यथासंभव सहायता करना, प्रत्येक धार्मिक आयोजन में सक्रिय भाग लेना, डायरी-लेखन उनकी जीवनचर्या के अभिन्न अंग थे। आपकी स्मृति में 'जिनभाषित' के लिए दान स्वरूप दो सौ रुपये प्रेषित किये गये।

प्रा. अरुण कुमार शास्त्री, ब्यावर

पंचदिवसीय महावीरजयंती पर्व सम्पन्न

भोपाल। श्री दिगम्बर जैन पंचायतकमेटी ट्रस्ट (पंजीयत) चौक, भोपाल के तत्त्वावधान में महावीर जयन्ती वर्ष २००५ पर्व मनाने हेतु ट्रस्ट की एक विशेष समिति गठित कर इस वर्ष विशेष उत्साह एवं ऐतिहासिक ढंग से मनाने हेतु पाँच दिवसीय कार्यक्रमों की योजना बनाई गयी और दिनांक १८ अप्रैल से २२ अप्रैल २००५ तक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया।

आध्यात्मिक एवं सामाजिक विचारगोष्ठी

श्री १००८ भगवान् महावीर वर्तमान जिनशासन नायक के जन्मजयन्ती महोत्सव पर सकल दिगम्बर जैन समाज किशनगढ़ द्वारा सामूहिक वात्सल्य-भोज के साथ-साथ दो दिवसीय गोष्ठी का सफल आयोजन हुआ। जिसमें गोष्ठी-संयोजक अनिल गंगवाल व नेमीचन्द्र जी भौच के अनुसार कार्यक्रम की अध्यक्षता पं. मूलचन्द जी लुहाड़िया व ताराचन्द्र जी दोषी व मुख्य अतिथि जयसिंह जी कोठारी 'नफा-नुकसान' पेपर के सम्पादक के मंगलाचरण, सुशीला जी पाटनी, गरिमा वाकलीवाल, भजन चेलना जागृति मण्डल द्वारा कार्यक्रम का शुभारम्भ हुआ।

अनिल गंगवाल

'अनेकान्त' अकादमी में महावीर के मौलिक चिंतन पर विचार-सभा एवं भव्य कवि-सम्मेलन

भोपाल, २५ अप्रैल २००५। भगवान महावीर के मौलिक चिंतन पर राष्ट्रीय अनेकान्त अकादमी के तत्वावधान में विचारमाला एवं भव्य कविसम्मेलन राजधानी भोपाल के चार इमली स्थित कम्युनिटी हॉल में ऐतिहासिक सफलता के साथ सम्पन्न हुये। इस अवसर पर विचार-सभा सहित सम्पूर्ण समारोह के मुख्यअतिथि न्यायमूर्ति श्री एन.के. जैन (अध्यक्ष-राज्य उपभोक्ता फोरम म.प्र.) ने अध्यक्षता की। सुप्रसिद्ध कवि श्री कैलाश मड़बैया 'साहित्य वारिधि' संयोजक थे, और संचालन किया विमल भंडारी ने।

विमल जैन

भगवान महावीर का २६०३वां जन्मजयन्ती महोत्सव मनाया गया

विश्ववंद्य अहिंसा-धर्म के युगप्रवर्तक एवं जैनधर्म के २४वें तीर्थंकर १००८ श्री भगवान महावीर का २६०३वाँ जन्मजयंती महोत्सव शुक्रवार २२ अप्रैल २००५ को प.पू. आर्यिकारत्न १०५ श्री पूर्णमति माताजी ससंघ के पावन सान्निध्य में हर्षोल्लास से विशाल रूप में मनाया गया।

हीराचन्द जैन

जरूर सुनें

सन्त-शिरोमणि आचार्यरत्न श्री 108 विद्यासागर जी महाराज के आध्यात्मिक एवं सारगर्भित प्रवचनों का प्रसारण **'साधना चैनल'** पर प्रतिदिन रात्रि 9.30 से 10.00 बजे तक किया जा रहा है, अवश्य सुनें।
नोट : यदि आपके शहर में **'साधना चैनल'** न आता हो तो कृपया **मोबाइल नं. 09312214382** पर अवश्य सूचित करें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

"हे प्रभु कब मैं सो मुनि बन हूँ"

• मुनि श्री प्रणम्यसागर जी

१

गिरि, मसान, गुह कोटर मज्झे,
बिन मालिक बिन शोधी सज्जे ।
दोष रहित वसती में बस कर,
निज मस्ती में मस्त हि रह हूँ ॥
हे प्रभु कब मैं सो मुनि बन हूँ ।

२

दो अनेक वा एक अकेले,
सब तीरथ सब मुनि मन मेले ।
शुद्ध पवन सम विहर विहर कर,
विरह राग से कबहूँ न सनहूँ ॥
हे प्रभु कब मैं सो मुनि बन हूँ ।

३

ज्यों गो चरने वन में जावे,
त्यों गोचर को वन से आवे ।
पर परिचय में चित न लगाकर,
चित चिन्मय से बतियाँ कर हूँ ॥
हे प्रभु कब मैं सो मुनि बन हूँ ।

४

चार मास इक ठाण हि ठाणे,
सह हों धूप मेघ औ जाड़े ।
दया क्षमा सब जीवन सौ धरि,
ध्यान अगनि से कर्मन दह हूँ ॥
हे प्रभु कब मैं सो मुनि बन हूँ ।

(आचार्यश्री विद्यासागरजी महाराज के शिष्य)

बोध

• धरमचंद वाझल्य

तुम्हारा क्रोध कम हो गया है,
यह परिवर्तन अब मुझे सुखद लगता है।
बाधाएँ दूर हो रही हैं,
कार्य सम्पन्न सहज हो गया है।
कब तक तुम इस तरह दूसरों को रहोगे आँकते
क्यों नहीं अपने ही अंतर में झाँकते
आरंभ तो करो –
स्वयं के द्वारा स्वयं को देखना
तब तुम्हें स्वयं ही
अपनी अनेक निरर्थकताओं का
सहज ही बोध हो जाएगा।

बी/92, शाहपुरा, भोपाल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि नं. UP/HIN/29933/24/1/2001-TC

डाक पंजीयन क्र.-म.प्र./भोपाल/588/2003-05

Estd. in 1997

Vidyasagar Institute of Management

(Recognized by AICTE, New Delhi, Govt. of MP & Affiliated to BVV, Bhopal)

Vallabh Nagar, BHEL Bhopal - 462 021. Ph. : 0755-2621718, Telefax : 0755-2621723, Mob.: 94250-21265

Modern Hostel Complex for Boys & Girls

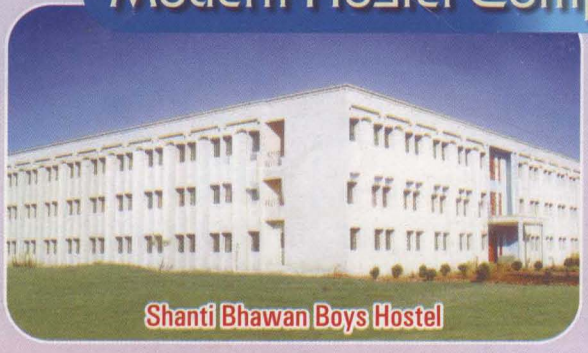

Shanti Bhawan Boys Hostel

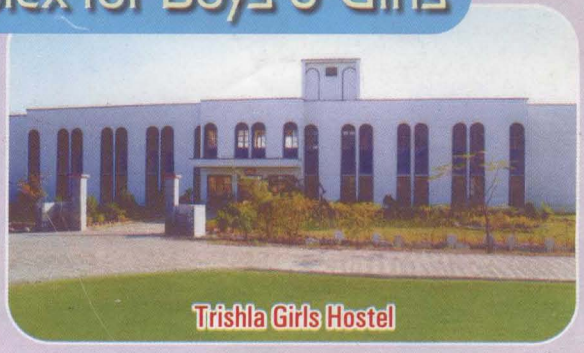

Trishla Girls Hostel

Special Features

- The Institute has hostel facilities available for boys & girls studying in Engineering, Management & Professional College.
- The Boys Hostel has the capacity of 200 students & the Girls Hostel of 100 students.
- Both the hostels are located in the campus itself.
- Both hostels have spacious and well furnished rooms with excellent live - in facilities.
- Each student in the hostel is provided with cot, cupboard, study table and study chair.
- The hostel mess is operated by a private contractor. It provides delicious & hygienic food. "ONLY VEGETARIAN FOOD IS SERVED IN THE MESS."
- The hostels are well furnished with all modern facilities like Water-Purifier, Colour TV, Phone and Internet facilities with Outdoor and Indoor games facilities.
- There are well furnished common rooms, guest rooms.
- The hostel provides good learning environment lays greater emphasis on moral and spiritual development of its students.
- The hostel has the first aid facilities; Senior Doctors are available on demand.
- The institute provides Bus Facility to the hostel residents.
- The hostel residents shall be encouraged to make effective use of campus facilities such as the computer centre and the library till late evening.
- The VIM offers moderate hostel facilities to boys & girls at reasonable & moderate rates.
- The hostel residents should follow hostel rules & regulations.

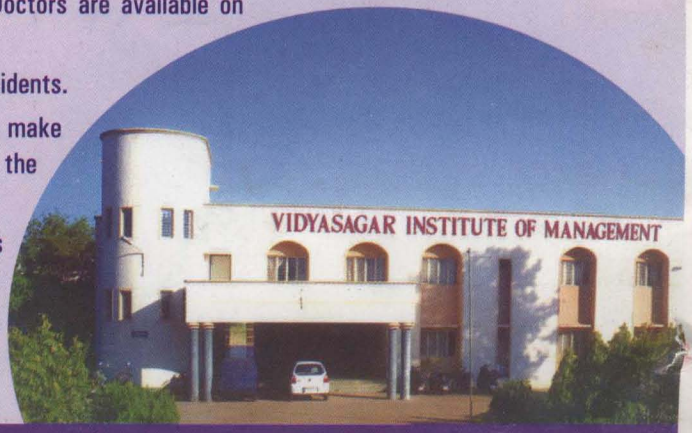

FOR MORE DETAILS, FEEL FREE TO CONTACT THE AUTHORITIES OF THE INSTITUTE

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक : रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, जोन-1, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं सर्वोदय जैन विद्यापीठ 1/205 प्रोफेसर कॉलोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org